भारत - विभाजन और हिन्दी कहानियाँ

(एम० फिल० की उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध)

शोध निर्देशक :
डॉ. एस. पी. सुधेश

शोधकर्त्ता :
नरेश कुमार

भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली-110067

1989

जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय
JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
NEW DELHI-110067

दिनांक : 5.1.1990

प्रमाणित किया जाता है कि श्री नरेश कुमार द्वारा प्रस्तुत ''भारत – विभाजन और हिंदी कहानियाँ'' शीर्षक लघु शोध-प्रबंध में प्रयुक्त सामग्री का इस विश्वविद्यालय अथवा किसी अन्य विश्वविद्यालय में इसके पूर्व किसी भी प्रदेय उपाधि के लिए उपयोग नहीं किया गया है ।

यह लघु शोध प्रबंध श्री नरेश कुमार की मौलिक कृति है ।

(केदारनाथ सिंह)
अध्यक्ष
भारतीय भाषा केन्द्र
जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय
नई दिल्ली - 110067.

(एस०पी० सुधेश)
शोध - निर्देशक
भारतीय भाषा केन्द्र
जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय
नई दिल्ली - 110067.

Gram : JAYENU Tel. : 667676, 667557 Telex : 031-4967 JNU IN

विषय - सूची

भूमिका —

पहला अध्याय : — पृष्ठ संख्या

पृष्ठ भूमि :- 1. भारत-विभाजन का राजनीतिक संदर्भ 5

2. भारत-विभाजन के परिणाम 24

दूसरा अध्याय: 35

भारत-विभाजन सम्बंधी हिंदी कहानियों का सामान्य परिचय ।

तीसरा अध्याय : 83

भारत-विभाजन सम्बंधी कहानियों की सम्वेदना

1. विभाजन की निस्सारता

2. साम्प्रदायिकता का विरोध

3. सांस्कृतिक समन्वय

4. उदार मानवीयता पर बल

5. क्षेत्रिय लगाव

6. शरणार्थियों की त्रासदी

चौथा अध्याय : 112

कहानियों का शिल्प-विधान

1. कहानी शैली:

वर्णनात्मक, पूर्वदीप्ति, आत्मकथात्मक, पूतीकात्मक ।

2. भाषा

3. व्यंग्यात्मकता

4. नाटकीयता

5. चरित्र-चित्रण

पाँचवा अध्याय: 144

उप संहार

सन्दर्भ ग्रंथों की सूची ।

भूमिका

नवम्बर, 1984 में इंदिरा गांधी हत्याकांड के बाद दिल्ली में जो साम्प्रदायिक दंगे हुए, वही मेरे इस कार्य के प्रेरणा - स्रोत बने । नवम्बर माह के तीन दिवसीय हत्याकांड को मैंने अपनी खुली आंखों से देखा था । साम्प्रदायिक ताकतें किस तरह से लोगों की मानसिकता को प्रभावित-परिवर्तित करती हैं, यह भी उन दिनों महसूस किया । सन् 1947 का भीषण नर-संहार नौ महीने तक चला था । उसमें प्रकट हुई मानव की पाशविक - वृत्ति का मात्र अंदाजा ही हम इन तीन दिवसीय हत्याकाण्ड से लगा सकते हैं ।

अभिव्यंजना प्रकाशन, दिल्ली से प्रकाशित नवम्बर, 1984 के दंगों पर आधारित कहानियों का संग्रह "काला नवम्बर" पढ़ा , तो मेरी रुचि 1947 के भारत-विभाजन से सम्बंधित कहानियों की ओर अनायास ही हो गयी । फिर मैंने अपने दादा-दादी से हिंदू-मुस्लिम दंगों की घटनाओं के बारे में सुना था । वे 1946 में लाहौर, से आये थे । कई रिश्तेदार वहीं रह गए । आज भी मेरी दादी जी अपनी बहिन (जो पाकिस्तान में रह गयी थी । को नहीं भूला पायी है । ये ही सब बातें मेरे इस कार्य की प्रेरक सिद्ध हुई ।

अब तक विभाजन से सम्बंधित हिंदी उपन्यास साहित्य पर कार्य हो चुका था, किंतु हिंदी कहानियों पर कोई सन्तोष जनक कार्य नहीं हुआ था । "देश-विभाजन और हिंदी कथा - साहित्य" लेखक डा॰ सूर्यनारायण रणसुभे और "हिंदी

कथा-साहित्य में भारत-विभाजन" लेखक डॉ॰ हेमराज "निर्मम" इन दो पुस्तकों में विभाजन से सम्बंधित हिंदी कहानियों की मात्र सामान्य परिचयात्मक समीक्षा ही की गई हैं, जो कि इन कहानियों की सम्पूर्ण संवेदना को प्रतिपादित करने में सक्षम नहीं है । अन्य अनेक आलोचकों ने छुट-पुट कहानियों की चर्चा की है, जो कि अपर्याप्त है ।

प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध को पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है ।

पहले अध्याय के दो भाग किए गए हैं । पहले भाग में विभाजन की पृष्ठभूमि को राजनीतिक संदर्भ में देखा-परखा गया है तथा दूसरे भाग में विभाजन के परिणाम, जो दोनों ओर के लोगों को भुगतने पड़े, पर गौर किया गया है ।

दूसरे अध्यायमें भारत-विभाजन से सम्बंधित हिंदी कहानियों की सामान्य परिचयात्मक समीक्षा प्रस्तुत की गई है ।

तीसरे अध्याय में कहानियों की सम्वेदना को, विभाजन की निस्सारता, साम्प्रदायिकता का विरोध, सांस्कृतिक समन्वय, उदार मानवीयता पर बल, क्षेत्रिय लगाव और शरणार्थियों की त्रासदी, छह भागों में विवेचित किया गया है ।

चौथे अध्याय में कहानियों के शिल्प-विधान पर विचार किया गया ह, जिसमें पाँच भाग किए गए हैं । कहानी शैली, इसके चार उपभाग-वर्णनात्मक, पूर्वदीप्ति आत्मकथात्मक और प्रतीकात्मक शैली । भाषा, व्यंग्यात्मकता, नाटकीयता और चरित्र-चित्रण ।

पाँचवे अध्याय में उपसंहार दिया गया है ।

गुरुवर प्रो॰ विश्वनाथ त्रिपाठी (दिल्ली विश्वविद्यालय) द्वारा दिए गए प्रोत्साहन और मेरे शोध-निर्देशक प्रो॰ एस॰पी॰ सुधेश, जिन्होनें अत्यधिक व्यस्त रहते हुए भी अपने सुझाव देकर इस प्रबंध को सम्भावित त्रुटियों से बचाया । इनके प्रति मैं नत - मस्तक हूँ । आभार प्रकट करने की धृष्टता में नहीं कर सकता ।

अंत में, उन सभी विद्वानों का आभार प्रकट करता हूं, जिनकी पुस्तकों से मैंने उनके विचार और उद्धरण इस लघु-शोध-प्रबंध को पूरा करने में ग्रहण किए ।

= नरेश कुमार =

पहला अध्याय : पृष्ठभूमि

भारत - विभाजन का राजनीतिक संदर्भ :-

1. भारत-विभाजन का राजनीतिक संदर्भ :-

सन् 1857 के विद्रोह का केंद्रीय संचालन अंतिम मुगल बादशाह बहादुर शाह जफर ने किया । मुसलमानों द्वारा फिर से शासन चाहने की भावना को अंग्रेजों ने बड़ी कुशलता के साथ कुचल दिया । वे जान गये थे कि "हम इस विश्वास से बाँध नहीं सकते कि मुस्लिम-जाति, मूलत: हमारी शत्रु है । अत: अब हमें हिंदुओं को खुश करके उन्हें अपने पक्ष में रखने की नीति अपनानी चाहिए ।"[1] हिंदु-मुस्लिम दोनों ने एक जूट होकर, क्रान्ति-युद्ध में अंग्रेजों का मुकाबला किया था । वे समझ गये कि इनकी एकता हमारे अस्तित्व के लिए खतरा पैदा कर सकती है । "इन दो समुदायों का {हिंदु-मुस्लिम} एक दूसरे के निकट का अस्तित्व ही हमारी राजनीतिक स्थान को निश्चित करने वाला है । यही सबसे महत्त्वपूर्ण मुद्दा हमारे सामने है ।"[2]

यूरोपिय शिक्षा पद्धति से, मुसलमान, अपनी संकुचित-धार्मिक-दृष्टि के कारण, विमुख रहें, किंतु, समन्वयशील हिंदु धर्म के लोग इस ओर अधिक प्रवृत्त हुये । परिणामत: अंग्रेजों को {हिंदुओं-मुसलमानों} दोनों में भेदभाव उत्पन्न करने और हिंदुओं को खुश करने का अवसर स्वयं ही मिल गया । अंग्रेज सरकार की नौकरियों में हिंदुओं की संख्या बढ़ने लगी । 14 जुलाई 1869 में कलकत्ते के फारसी भाषा के पत्र "दूरबीन" ने अंग्रेज सरकार द्वारा

---

1. रामधारी सिंह दिनकर: संस्कृति के चार अध्याय:पृ.635
2. सूर्य नारायण रणसुभे : देशविभाजन और हिंदी कथा साहित्य-19

नौकरियों में मुसलमानों के प्रति किये जा रहे भेदभाव को व्यक्त करते हुए लिखा था-"सभी छोटे-मोटे पद धीरे-धीरे मुसलमानों से छीने जा रहे हैं और दूसरी जातियों के लोगों को विशेषत: हिंदुओं को दिये जा रहे हैं। सरकार को अपनी सारी प्रजा पर एक सी दृष्टि रखनी चाहिए, जबकि सरकार राजपत्रों में सार्वजनिक रूप से घोषित करती है कि मुसलमानों को सरकारी पदों पर नहीं लिया जाएगा।...सरकारी नज़र में अब मुसलमान इतने गिर गये हैं कि अब यदि सरकारी पद प्राप्त करने की योग्यता भी हो तो भी सरकारी सूचना निकाल कर उन्हें उस पद के लिए अयोग्य ठहरा दिया जाताहै। उनकी इस असहाय दशा पर कोई ध्यान देने वाला भी नहीं है और उत्तराधिकारी तो उनका अस्तित्व मानने के लिए भी तैयार नहीं है।"[1]

पढ़े-लिखे हिंदुओं की संख्या सरकारी नौकरियों एवं शिक्षा-संस्थाओं में बढ़ी, किंतु, उच्चतम नौकरियों में अंग्रेजों की नियुक्ति तथा हिंदुस्तानियों के साथ उनके अधिकारों और वेतनमानों में भेदभाव बरता गया, जिससे हिंदुओं में असंतोष की चिंगारी उभरने लगी।[2] पढ़े-लिखे लोगों के असंतोष को विस्फोट की सीमा तक न पहुँचने देने के उद्देश्य से ह्यूम ने सन् 1885 में अखिल भारतीय कांग्रेस की स्थापना की।[2] कांग्रेस के उद्देश्यों से मुसलमानों के विचार मेल नहीं खाते थे। इसलिए इस ओर अधिकतर हिंदू ही आकृष्ट हुए।

दूसरी ओर मुसलमानों की स्थिति और भी सोचनीय हो गयी। अंग्रेजों के कोप-भाजन तो वे थे ही साथ ही, जिन हिंदुओं पर उन्होंने शासन किया था, आज वे ही उनसे हर क्षेत्र में आगे निकले जा रहे थे

---

1. राम गोपाल: भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास: पृ. 26
2. सूर्य नारायण रणसुभ: देश विभाजन और हिंदी कथा साहित्य: पृ. 20

और कौन कह सकता था कि "राष्ट्रीय आन्दोलन सफल हुआ तो बहादुरशाह के खानदान के किसी शहजादे को खोजकर भारतवासी उसे अपना बादशाह चुनेंगे ।"[1]

मुसलमानों को इस बेचारगी की अवस्था से उबारने के उपाय सर सैयद अहमद खाँ ने किये । वे अपने पूर्व जीवन में हिंदु-मुस्लिम एकता के हामी थे । यहाँ तक कि भारत भूमि में बसने वाले सभी लोगों के लिए हिंदु शब्द का प्रयोग करते थे । एक बार उन्होंने पंजाब में हिंदुओं की सभी में कहा था-"आप जिस हिंदु शब्द का अपने लिए प्रयोग करते हैं, वह ठीक नहीं है, क्योंकि मेरे दृष्टि से वह धर्म का नाम नहीं है । हिंदुस्तान का हर वासी अपने को हिंदु कह सकता है । मुझे इस बात का दु:ख है कि आप मुझे हिंदु नहीं समझते, जबकि मैं हिंदुस्तान का वासी हूँ ।"[2] किंतु सन् 1857 ई० के विद्रोह के बाद अंग्रेजों ने मुसलमानों पर अत्याचार करने शुरू किये तो उन्होंने फैसला किया कि अपना सारा जीवन अपने धर्म-बंधुओं की बेहतरी के लिए लगा देंगा । इसके लिए उन्हें दो उपाय दिखाई पड़े "एक तो यह कि मुस्लिम जनता में अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजीशासन के प्रति जो विरोध का भाव है वह बिल्कुल दूर कर दिया जाए । दूसरा यह कि अंग्रेजी शासन के मन से मुसलमानों पर जमी हुई शंका निर्मूल कर दी जाए ।"[3] मुसलमानों के प्रति शंका को मिटाने के लिये उन्होंने लेख और पुस्तके लिखीं, जिनमें सिद्ध

---

1. रामधारी सिंह दिनकर: संस्कृति के चार अध्याय- पृ. 592
2. रामगोपाल: भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास-पृ. 45
3. रामधारी सिंह दिनकर: संस्कृति के चार अध्याय-पृ. 595

किया गया कि गदर के समय जिन मुसलमानों ने आवेश में आकर गलती की थी, उन्हें सरकार से क्षमा मिलनी चाहिए । और जिन मुसलमानों ने अंग्रेजों का साथ दिया था, उन्हें गौरवान्वित किया जाना चाहिए ।

अलीगढ़ में "मोहम्डन-एंग्लोओरियंटल कालेज" की स्थापना का उद्देश्य सर सैयद अहमद खाँ ने रखा कि मुसलमान अपने धर्म की रक्षा करते हुए अंग्रेजी पढ़ें तथा ब्रिटिश सरकार की सुयोग्य प्रजा के रूप में सामने आये । मुसलमानों को अंग्रेजों की राजभक्ति और उनका प्रिय पात्र बनाने के लिए उन्होंने बार-बार कहा "जो आशायश[आराम] एक गवर्नमेंट में होना चाहिए वह ब्रिटिश गवर्नमेंट में हासिल है । हिंदुस्तान में इंगलिश हकूमत जमाने दराज[बहुत देर]तक ही नहीं एटरनल [सदा] बनी रहे । मुसलमानों के ऊपर खुदा ने इनको[अंग्रेज को] हाकिम कर दिया । यह खुदा की मर्जी[इच्छा] है । हमें खुदा की मर्जी पर शाकिर [संतुष्ट] रहना और खुदा के हुक्म की इताायत[आज्ञापालन] करके उनका दोस्त और वफादार रहना चाहिए ।"1

सर सैयद अहमद खाँ के हिंदू-मुस्लिम एकतावादी विचारों में परिवर्तन लाने का श्रेय बैक नामक एक अंग्रेज को जाता है । ये"मोहम्डन एंग्लोओरियंटल कालेज" के 1883 ई॰ से 1899 ई॰ तक प्रिंसिपल रहे । 1895 ई॰ के अपने व्याख्यान में बैक साहब ने कहा था-"अंग्रेज-मुस्लिम एकता संभव है, पर हिंदू-मुस्लिम एकता असंभव।••अंग्रेजों की नौकरियों में मुसलमानों को गुणवत्ता के आधार पर नहीं, अंग्रेजों के प्रति वफादारी के आधार पर लिया जाना चाहिए ।" 2

1• प्रो0 मुकुट बिहारी लाल:भारत का राष्ट्रीय आंदोलन:पृ•18।

2• सूर्य नारायण रणसुभे:देश विभाजन और हिंदी कथा साहित्य-पृ•23

राष्ट्रीय कांग्रेस का मुख्य अभिप्राय: यही था कि अंग्रेज सरकार द्वारा सभी भारतीयों को सुख-सुविधा मिले। जिन अधिकारों के लिए राष्ट्रीय कांग्रेस लड़ रही थी, वे केवल एक ही धर्म या जाति के लोगों के लिए नहीं थे। कहने का अभिप्राय: यह है कि उनका उद्देश्य हिंदू और मुसलमान के लिए अलग-अलग अधिकार प्राप्त करना नहीं, बल्कि उसके पीछे राष्ट्रीय-हित की चिंता ही प्रमुख थी। सर सैयद अहमद खाँ ने सभी धर्म और जाति के समान हितों को साथ लेकर चलने वाली इस प्रकार की संस्था की सम्भावना से ही इन्कार किया और अपने समुदाय के साथ-साथ पूरे देश का इसे अहित माना। उन्होंने कहा-" "मेरी समझ में नहीं आता कि "राष्ट्रीय कांग्रेस का क्या अर्थ है। क्या यह मान लिया जाए कि भारत में जो विभिन्न जातियां रहती हैं वे एक ही राष्ट्र की हैं या एक राष्ट्र बन सकती हैं और उनके उद्देश्य तथा आकांक्षाएं भी एक तथा समान हो रहेंगी। मैं समझता हूं कि ये सब बातें संभव नहीं। यदि ये संभव नहीं, तो "राष्ट्रीय कांग्रेस" जैसी कोई चीज नहीं है और न उससे सब लोगों का समान हित ही हो सकता है। आप समझते हैं कि इस अयथार्थ नामवाली राष्ट्रीय कांग्रेस के अर्थों से देश का भला होगा? परन्तु मुझे खेद पूर्वक कहना पड़ता है कि इसके कार्यों से हमारे समुदाय का ही अहित नहीं वरन् किसी सीमा तक सारे देश का भी अहित है। भारत को एक राष्ट्र मानने वाली किसी भी कांग्रेस का चाहे उसका जो स्वरूप या प्रकार हो, मैं विरोध करता हूं।"[1]

ऐसा नहीं है कि सभी मुसलमान नेता कांग्रेस के खिलाफ थे। अमीर अली जैसे नेता कांग्रेसी विचारों के समर्थकों में से थे, जो मानते थे कि-"हम अच्छी तरह समझते हैं कि भावी कांग्रेस का उद्देश्य ऐसे कार्यों को बढ़ावा देना है जिनसे भारत के लोगों की स्थिति सुधरे। हम ऐसी बातों का हार्दिक विरोध करते हैं जो स्तुत्य उद्देश्य में अड़ंगा लगाने वाली हों और ऐसी बातों का समर्थन करते हैं, जो इसमें सहायक सिद्ध होती हों।"[2]

---

1. रामगोपाल:-भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास-पृ0 62
2. " " " " पृ0 70

कांग्रेस के लिए अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के विचार मुस्लिम नेताओं में थे, फिर भी उन्हें कांग्रेस के विरोध में एक ऐसे संगठन की आवश्यकता महसूस हुई, जो केवल उन्हीं का हो और जो आन्दोलनात्मक क्रिया कलापों में कोई योगदान न दे, न ही सार्वजनिक सभाओं का आयोजन करे। दिसम्बर 1893 में एक नया संगठन बनाया गया और उसका नाम "मोहम्मडन ऐंग्लोओरियंटल-डिफेंस एसोसिएशन ऑफ् अपर इण्डिया" रखा गया। ब्रिटिश सरकार के हाथों को मजबूत बनाए रखना ही इसका प्रमुख उद्देश्य था।

लार्ड कर्जन ने हिंदू-मुसलमानों में जो थोड़ी-बहुत एकता बाकी थी उसको तोड़ने के लिए राजनीतिक चालों का इस्तेमाल किया। बंगाल विभाजन की योजना उसी साल का ही हिस्सा थी। इस योजना के विरोध में सैंकड़ों सभाएं हुई और इसका विरोध सम्मिलित रूप से हिंदू और मुसलमानों ने किया। फरवरी 1904 में कर्जन ने पूर्वी बंगाल का दौरा किया। विभिन्न स्थानों पर उन्होंने प्रमुख मुसलमानों से विचार-विमर्श किया और अनेक सभाओं में लम्बे-लम्बे भाषण दिये। कर्जन ने उन लोगों से कहा कि बंगाल-विभाजन का मेरा उद्देश्य केवल प्रशासन की सुविधा के लिए नहीं है, बल्कि एक मुस्लिम प्रान्त के निर्माण के लिए भी है, जिसमें इस्लाम की प्रधानता होगी और उसके अनुयायियों का प्रभुत्व होगा और इसीलिए मैंने ढाके के दो शेख जिलों को भी इस योजना में सम्मिलित करने का निश्चय किया है। उन्होंने अपने भाषण में कहा-"पूर्वी बंगाल के मुसलमानों में ऐसी एकता का अविर्भाव होगा जैसी मुसलमानों के शासन-काल में भी नहीं रही।"[1]

20 जुलाई 1905 को बंगाल-विभाजन पर भारत के सचिव का ठप्पा लग ही गया। इस अवसर का लाभ उठाने के लिए अंग्रेजों ने हिंदू और मुसलमानों को परस्पर लड़ाने की भरसक कोशिशें की। उनसे कहा गया कि इस विभाजन से मुसलमानों को फायदा है, क्योंकि पूर्वी बंगाल और आसाम में उन्हीं की आबादी अधिक है। बंग-भंग के विरोध स्वरूप "बंगाल में

---

1. रामगोपाल:- भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास-पृ095

और आन्दोलन चल गया । बाबू सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, जिन्होंने अपना सर्वस्व देश सेवा के लिए अर्पण कर दिया था, इसके मुख्य नेता हुए । पहले सरकार से प्रार्थना की गयी, सुनवाई न होने पर स्वदेशी वस्तुओं के प्रचार और विलायती वस्तुओं के बहिष्कार की प्रतिज्ञा की गयी । इसमें देश के प्रायः सभी प्रान्तों ने बंगाल का साथ दिया । स्वदेशी वस्तुओं के प्रचार से आन्दोलन में एक नया जीवन आ गया । कांग्रेस ने भी "स्वदेशी और बायकाट" की नीति को मान लिया । देशभर में नये कारखाने खुल गये, समाचार पत्रों में निर्भीकता आ गयी । अशिक्षित समाज में भी देश की चर्चा होने लगी, एकता का भाव बढ़ने लगा और भारत वर्ष में राष्ट्रीयता का सचमुच जन्म हो गया ।[1]

सन् 1899 में लखनऊ में कांग्रेस का जो अधिवेशन हुआ उसमें मुसलमान प्रतिनिधियों की संख्या बहुत अधिक थी । 789 प्रतिनिधियों में से 300 प्रतिनिधि मुसलमान थे ।[2] इससे लगता है कि मुसलमानों के बीच कांग्रेस लोकप्रिय होती जा रही थी । किंतु मुसलमानों का एक वर्ग धार्मिक शिक्षा के प्रभाव के कारण हिंदुओं से अलग हो रहा । ये लोग आर्य समाज का गैर-हिंदुओं और धर्म परिवर्तित हिंदुओं को फिर से हिंदू बनाने की बात से, गोसंवर्धन, तिलक के गणपति उत्सव, हिंदू समर्थित आंदोलनों का तीव्र विरोध कर रहे थे । दूसरे वर्ग के लोगों ने जातीयता से ऊपर उठकर राजनीतिक दृष्टि से हिंदू और मुसलमानों में कोई फर्क नहीं समझा ।

बंगाल-विभाजन की वजह से जो राष्ट्रीय आन्दोलन जन-आंदोलन का रूप ले रहा था । देश को इस प्रकार की स्थिति में या कांग्रेस को इस आन्दोलन में प्रसिद्धि के कारण मुसलमानों को एक ऐसी राजनीतिक संस्था की आवश्यकता महसूस हुई जो कांग्रेस से टक्कर ले सके तथा

मुसलमानों का प्रतिनिधित्व कर सके । 30 सितम्बर 1906 में ढाका में नवाब बकारुलमुल्क के सभापतित्व में देश के प्रमुख मुसलमानों की बैठक

---

1. गंगा शरण मिश्र:- भारत में ब्रिटिश साम्राज्य- पृ0 442-43
2. रामगोपाल:- भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास-पृ078

हुई और अखिल भारतीय मुस्लिम लीग की स्थापना की गयी । लीग के अध्यक्ष नवाब बकारुलमुल्क ने अलीगढ़ में विद्यार्थियों की सभा में लीग के उद्देश्य और ध्येय प्रस्तुत किए । उन्होंने कहा-"खुदा खैर रखे, यदि कहीं ब्रिटिश सरकार का अन्त हुआ तो हिंदू राज्य करने लगेंगे और हमारा जीवन, सम्पत्ति तथा सम्मान सदा संकट में रहेगा । इसलिए मुसलमानों को ब्रिटिश शासन बनाए रखने में सहायक होना चाहिए । अच्छा यही होगा कि मुसलमान अपने आप को अंग्रेजों की ऐसी फौज समझे जो ब्रिटिश राज्य के लिए अपना खून बहाने और बलिदान करने को तैयार है ।"[1]

ऐसा तो लगता ही है कि मुस्लिम-लीग की स्थापना कांग्रेस के साथ सहयोग की भावना से प्रेरित नहीं थी साथ ही यह भी कि वे हिंदुओं को अपना विरोधी ही मान रहे थे, जैसे कि बकारुलमुल्क के द्वारा बताए गए मुस्लिम-लीग के उद्देश्यों से पता चलता है । इस प्रकार लीग राजभक्ति पूर्ण विचारों और साम्प्रदायिक-दृष्टि को लेकर चली हुई ।

देश में आयी राष्ट्रीयता की लहर से अंग्रेज सरकार भली-भांति परिचित हो रही थी । वे साम-दाम-डंड-भेद आदि नीतियों द्वारा लोगों के मन से इस भावना को निकाल देना चाहते थे । उनको इन नीतियों को अपनाने के लिए मुसलमानों का सहयोग स्वतः ही मिल गया जब शिमला में मुसलमानों का एक शिष्ट मण्डल लार्ड मिन्टों से मिला और अपनी मांगों में अलग निर्वाचन-क्षेत्र की मांग करने लगा । मिंटो-मार्ले-रिफार्म द्वारा मुसलमानों के लिए अलग निर्वाचन-क्षेत्र बनाने की घोषणा के साथ ही यह स्पष्ट हो गया कि अब से मुसलमानों को सहायता और सहयोग से अपनी सत्ता बनाये रखेंगे और दूसरी ओर "विधान मण्डलों में मुसलमानों को उनकी संख्या के अनुपात से अधिक प्रतिनिधित्व प्रदान करने के प्रस्ताव से मुसलमान इस प्रलोभन में फंसे कि हमारा जितना दावा हो सकता है, हमें उससे अधिक ही मिला है और

---

1. रामगोपाल:- भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास-पृ०94

इस प्रकार हमें राजनीतिक आन्दोलन से दूर ही रहना चाहिए ।"1

साम्प्रदायिकता की भावना को भड़काने वाली इस प्रकार की घोषणा द्वारा कांग्रेस का नाराज होना स्वाभाविक ही था। इससे हिंदू - मुस्लिम भेदभाव को बढ़ावा मिला । इस निर्वाचन-योजना द्वारा मुसलमानों ने बिना प्रयत्न और आन्दोलन किए ही हिंदुओं से अधिक हक प्राप्त कर लिये ।"कांग्रेस मंच पर इस योजना की जो निंदा हुई, उससे मुसलमानों की यह धारणा बनी की मुसलमानों के हितों की रक्षा राजनीतिक आन्दोलनकारियों से गठबंधन करने से नहीं, बल्कि साम्प्रदायिक एकता बनाए रखने से ही अच्छी तरह हो सकती है ।"2

प्रथम विश्व-युद्ध में मित्र - राष्ट्रों की विजय के बाद तुर्की के सुलतान का खलीफा कहलाने के अधिकार को छीन लिया गया । चूंकि तुर्कों का सुलतान संसार का सबसे बड़ा मुसलमान होने के नाते इस्लाम का खलीफा कहलाता था, इसलिए संसार भर के मुसलमानों ने अंग्रेजों के खिलाफ जिहाद छेड़ने का आहवाहन किया । भारत के कुछ मुल्लाओं, जिनमें मौलाना मोहम्मद अली और मौलाना शौकत अली प्रमुख थे, अलीगढ़ कालेज से निकले हुए कुछ उच्चवर्ग के बुद्धिजीवी मुसलमानों, जिनमें दिल्ली के डाक्टर अंसारी और लखनऊ के चौधरी खलीकुज्ज रहमान प्रमुख थे, ने तुर्की के सुलतान को खलीफा बनाए रखने के लिए खिलाफत आन्दोलन शुरू किया ।

इस समय महात्मा गांधी भारतीय राजनीतिक मंच पर छाये हुए थ, उन्होंने हिंदुओं से मुसलमानों के सहयोग की अपील की ।"अपने मुसलमान भाई के साथ उसके सद्उद्देश्य के लिए मुझे भी कष्ट झेलना चाहिए ।...मैं उनकी यह बात मानता हूं कि

---

1. रामगोपाल: भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास-पृ. 106
2. - वही - पृ. 107

खिलाफत उनके लिये धार्मिक प्रश्न है और वे उसके ध्येय तक पहुँचने में जान की बाजी भी लगा देंगे।"[1] गांधीजी के प्रयत्न से हिंदु-मुस्लिम भाई-भाई के नारे देश में गूंजने लगे। भारतीय मुसलमानों को इस आन्दोलन द्वारा जो सबसे बड़ा लाभ मिला वह उनकी साम्प्रदायिक एकता की मजबूती और भारतीय राजनीति में अपनी अलग पहचान कायम करना था। इसका दायित्व अप्रत्यक्ष रूप से महात्मा गांधी पर ही जाता है क्योंकि वे स्वयं उनके साथ मिलकर खिलाफत आंदोलन को सफल बनाने का प्रयत्न कर रहे थे।

सन् 1923 में तुर्की में क्रांति हुई जिसमें अंग्रेज़ों ने खिलाफत के साथ तुर्की के सुलतना को भी समाप्त करके सत्ता अपने हाथों में ले ली। मुस्लिम लीग जो कि भारतीय राजनीति पर छा गयी थी ने अपना जिहादी जोश हिंदुओं की ओर कर दिया। देश में जगह-जगह हिंदू-मुस्लिम दंगे होने लगे। सन् 1924 में मोपाला-विद्रोह हुआ, जिसका प्रधान कारण आर्थिक था, किंतु हिंदुओं पर उसमें बहुत अत्याचार किये गए। बहुत से हिंदुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया गया और उनके मंदिर तोड़ डाले गये। "हिंदू हिंदुओं को बचाने दौड़े। मुसलमान यह कहते दौड़े की मोपले भी माँ-बाप हीन नहीं है।"[2]

मुस्लिम लीग ने स्वतन्त्रता संग्राम में कांग्रेस की भांति कोई योगदान नहीं दिया और न ही उसके पास इस प्रकार का कोई कार्यक्रम था। अब तक लोगों की यह धारणा बन चुकी थी कि मुसलमानों

----

1. राम गोपाल:-भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास पृ0 131
2. रामधारी सिंह दिनकर :- संस्कृति के चार अध्याय- पृ0 638

के अधिकारों की ओर से बोलने वाली एक मात्र संस्था मुस्लिम लीग ही है, जबकि सम्प्रदायवाद ही उसका भारतीय राजनीति में बने रहने का कारण रहा । "उनका आन्दोलन तो इसलिए था कि उन्हें सत्ता में अंश प्राप्त हो लीग की चाहे जो प्रवृत्ति रही हो, परन्तु जब जब राजनीतिक सुधारों की मांग हुई तब तब अपना हिस्सा लेने के लिए आगे रही ।"[2]

स्वायत्त शासन कानून के अंतर्गत 1937 में आम चुनाव हुए, जिसमें कांग्रेस को भारी बहुमत से विजय प्राप्त हुई और मुस्लिम लीग बुरी तरह से पराजित हुई । कांग्रेस ने मुस्लिम लीग को मंत्री परिषदों में हिस्सा देने और इसे मुसलमानों की एक मात्र संस्था मानने से इंकार कर दिया । इससे मुस्लिम नेताओं के आत्म-सम्मान को गहरी चोट पहुंची । कांग्रेसी शासन को "हिंदू राज्य" कहकर बुरा-भला कहा गया । अब मुस्लिम लीग ने मजहब को अपनी कूटनीति का आधार बनाया । "वे मजहब पर जातीय संस्कृति और भाषा को बलि चढ़ा देना चाहते थे । यह तभी संभव था अगर वे समान संस्कृति, जातीयता और भाषा का विरोध करते और स्वयं को एक अलग कौम के रूप में सामने लाते ।"[2]

पीरपुर रिपोर्ट तथा शरीफ रिपोर्ट में हिंदुओं द्वारा मुसलमानों पर किये गए अत्याचारों का लेखा-जोखा प्रकाशित किये जाने से मुस्लिम जनता एक जुट होने लगी । मात्र यह कहकर कि अमुक जगह इस्लाम का अपमान हुआ है, मुसलमानों की धार्मिक-भावनाओं को भड़काने का सबसे बढ़िया तरीका उनके नेताओं ने

---

1. राम गोपाल : भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास-पृ0 268
2. नरेन्द्र मोहन : दृश्यान्तर - पृ0 192

अपना लिया था ।

"वंदे मातरम्" गीत को बुत-परस्ती का प्रेरक बताकर इसे इस्लाम-विरोधी ठहराया गया ।

सन् 1924 में अनेक भागों में हुए हिंदू-मुस्लिम दंगों के दौरान मौलाना मोहम्मद अली ने शंका जाहिर करते हुए कहा था कि यदि इस समस्या का हल नहीं निकाला गया तो भारत "हिंदू इण्डिया" और "मुस्लिम इण्डिया" में विभक्त हो जाएगा । लंदन में चौधरी रहमत अली ने 1930 में हुई राउंड टेबल कान्फ्रेंस के समय मुस्लिम नेताओं को भारत के उत्तर-पश्चिम में एक मुस्लिम-राज्य जिसका नाम पाकिस्तान होगा। "प" पंजाब, "आ" अफगानिस्तान, "क" काश्मीर, "स" सिंध, और "इस्तान" बलुचिस्तान। की योजना बतायी ।

मुसलमानों के लिए एक अलग राष्ट्र का नारा 1930 ई0 में इलाहाबाद में बोलते हुए डा0 इकबाल ने बुलंद किया-"मैं चाहता हूं कि पंजाब, उत्तर पश्चिम सीमा प्रांत, सिंध और बलुचिस्तान एक राष्ट्र में सम्मिलित हों, ब्रिटिश शासन के अंदर या उसके बाहर आत्मशासन और उत्तर पश्चिम भारत का एक ठोस मुस्लिम राष्ट्र मुझे ऐसा लगता है, मुसलमानों का अंतिम भाग्य है, कम से कम उत्तर - पश्चिम भारत का ।"[1]

पाकिस्तान का नाम अभी योजनाओं और नारों तक ही सीमित था, किंतु आगे चलकर समाचार पत्रों और सभाओं द्वारा इसका बार-बार उल्लेख होने के कारण यह एक समस्या के रूप में सामने आया । कांग्रेसी नेताओं ने भी जिनमें गांधी जी को

----

1. मन्मथनाथ गुप्त:- कांग्रेस के सौ वर्ष -पृ0 145

प्रमुख भूमिका रही, मोहम्मद अली जिन्ना को अत्यधिक महत्व देकर इस समस्या को और बढ़ा दिया । जो महात्मा सारे देश के लिए श्रद्धा और विश्वास की मूर्ति था वही जब मि० जिन्ना के लिए श्रद्धा और सम्मान का व्यवहार करे, तो मुसलमानों की नज़रों में मि० जिन्ना का महत्व कितना बढ़ गया होगा इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है । वे ही उनको अपने एकमात्र हित-चिंतक दिखाई दिये, जो उनके भावी जीवन की सुरक्षा सफलता और उनके लिये एक नये राज्य की कल्पना को साकार करने की तमाम विशेषताओं, सम्भावनाओं और गुणों को लिये हुए थे ।

द्वितीय विश्वयुद्ध में कांग्रेस ने अपने मंत्री-मण्डलों से स्वेच्छा से त्याग पत्र दे दिया । अंग्रेज सरकार के लिये कांग्रेस महत्वहीन हो गयी । उसने मुस्लिम-लीग को युद्ध में सहयोग देने को दृष्टि से देखा । मुस्लिम-लीग को यह अवसर लाभदायक रहा । ब्रिटिश सरकार और मुस्लिम-लीग में अलिखित समझौता हुआ जिसके अनुसार लीग द्वारा ब्रिटिश सरकार को कांग्रेस के खिलाफ हर संभव सहायता देने का वचन दिया गया । बदले में ब्रिटिश सरकार ने भी मुस्लिम लीग को भारत के मुसलमानों की एक मात्र संस्था मानकर इसे हर प्रकार का सहयोग देने का फैसला किया ।

"कांग्रेस पार्टी की ही तरह मुस्लिम लीग भी अंग्रेजी शासन से आजादी चाहती थी । लेकिन जहां कांग्रेस का नारा "अंग्रेजों, भारत छोड़ो" था, वहीं मुस्लिम लीग का नारा था "बंटवारा करो और तब छोड़ो"। दूसरे शब्दों में उन्हें सिर्फ अंग्रेजी राज्य

से ही नहीं बल्कि हिंदुओं से भी आजादी चाहिए थी ।" ।
क्यों कि बहुसंख्यकों के अत्याचार से बढ़कर कोई अत्याचार नहीं हो सकता ।[2] और भारत मुसलमानों की न कभी मातृ भूमि रही न रहेगी ।[3] उनका दावा था कि मुसलमानों का दबाव बहुत अरसे से था और इसमें मुसलमानों का बुरी तरह शोषण हुआ था । मुस्लिम लीग का सबसे दृढ़तम्भ था देश का बंटवारा-पाकिस्तान का निर्माण, हिंदुस्तान के उन हिस्सों को लेकर जहां मुसलमानों का बहुमत था यानि बंगाल, पंजाब, सिंध और उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रदेश ।"

मुसलमानों को अपना भविष्य किसी केंद्रीय शासन के अधीन रहने पर सुरक्षित नहीं दिखाई पड़ रहा था । इस प्रकार की भावनाओं को उकसाने में लीगी नेताओं का ही हाथ रहा । उन्होंने मुस्लिम मस्तिष्क को इस प्रकार तैयार किया कि वे समझ लें, भारत एक नहीं, दो राष्ट्र है । मोहम्मद अली जिन्ना ने मार्च 1940 में लीग के अधिवेशन में बोलते हुए कहा, -".. हिंदुओं और मुसलमानों का सम्बंध दो विभिन्न दर्शनों, सामाजिक रीति-रिवाजों और साहित्यों से है । इसमें न तो परस्पर विवाह-संबंध ही हो सकते हैं और न इनका खान-पान ही एक साथ हो सकता है और निश्चय ही इनका संबंध ऐसी दो विभिन्न संस्कृतियों से हैं जिनके विचार और धारणाएं परस्पर विरोधी हैं ।

---

1. लिओनार्ड मोसले :- । और 4 भारत में ब्रिटिश राज्य के अंतिम दिन पृ. 4
2. राम गोपाल:- भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास पृ. 245
3. - वही - पृ. 257

...ऐसे दो राष्ट्रों को एक ही राज्य में जोतना जबकि इनमें से एक अल्प-संख्यक और दूसरा बहुसंख्यक है, असंतोष को बढ़ावा देना है।" 1

ऐसी अवस्था में अबुल कलाम आजाद के प्रस्ताव पर आधारित "कैबिनेट मिशन ने एक योजना कांग्रेस और मुस्लिम लीग के सामने रखी, जिसमें पूरे देश की इकाई की एक स्वतन्त्र सरकार होगी, जिसके अधीन तीन विभाग तय किये गए-सुरक्षा, विदेश और संचार-साधन। साथ ही देश को तीन अनुभागकीय भागों में बांटा गया। पहला भाग (ग्रुप ए) वह होगा जहां हिंदू बहुमत में है यानि हिंदुस्तान का अधिकांश हिस्सा। दूसरे भाग (ग्रुप बी) में पंजाब, सिंध, उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रदेश और ब्रिटिश बलूचिस्तान जहां मुसलमानों का बहुमत है। तीसरे भाग (ग्रुप सी) में बंगाल और आसाम जहां मुसलमानों का हल्का बहुमत है। इस तरह अल्प संख्यक मुसलमान घरेलू मामले में खुदमुख्तार होंगे और हिंदुओं के आधिपत्य से बच जायेंगे।" 2

दोनों पक्षों ने यह योजना मान ली। वायसराय और कैबिनेट मिशन के लोग खुशी से फूले नहीं समाये। इस योजना के पारित होते ही ऐसा लगा कि अब शांति और ब्रिटिश हकूमत से आजादी मिलने के साथ ही साम्प्रदायिक दंगे और आपसी लूटमार से मुक्ति मिल जाएगी।

---

1. रामगोपाल:- भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास-पृ0 255
2. लियोनार्ड मोसले:- भारत में ब्रिटिश राज्य के अंतिम दिन-पृ. 12-13

मोहम्मद अली जिन्ना चूंकि कांग्रेस के इरादों और लक्ष्य को हमेशा गहरे शक की नजर से देखता था, किंतु उसका कैबिनेट मिशन की योजना को मान लेना ही बहुत बड़ा समझौता था। ऐसी हालत में कांग्रेसी नेताओं को चाहिए था कि वे भी सोच-समझकर अपनी प्रतिक्रियाएं व्यक्त करें, क्योंकि कोई भी गलत बयान कफन में कील साबित हो सकता था।

कांग्रेस के सभापति की हैसियत से नेहरू जी ने एक प्रेस-कान्फ्रेंस बुलाई जिसमें उनसे पूछा गया कि क्या कांग्रेस कैबिनेट मिशन की योजना को सोलह आने मान चुकी है? इस पर नेहरू जी ने कांग्रेस को किसी भी बंधन से मुक्त तथा किसी भी स्थिति का सामना करने के लिए स्वतन्त्र बताया। उन्होंने आगे कहा कि चाहे जिस तरह से इस मसले को देखा जाए, सबसे ज्यादा संभावना इस बात की है कि टुकड़े बने ही नहीं। "स्पष्ट है कि खण्ड ए (हिंदू बहुमत) इसके विरोध में वोट देगा।..उत्तर पश्चिम सीमांत प्रदेश भी टुकड़ों के खिलाफ वोट देगा। इसका अर्थ हुआ ग्रुप बी खतम। इस बात की बहुत बड़ी संभावना है कि बंगाल और आसाम भी टुकड़ों के खिलाफ हो जाएगा।.. इसलिए यह साफ है कि टुकड़ों में बांटने की यह बात, चाहे जिस तरह उसे देखिए, आगे नहीं बढ़ पाती।"[1]

नेहरू जी की बातों से यह साफ जाहिर था कि कांग्रेस कैबिनेट मिशन की योजना को अपनी मर्जी के मुताबिक केंद्रीय सत्ता का उपयोग करेगी। जबकि मुस्लिम लीग ने योजना को अपने कटे-छंटे रूप में स्वीकार कर लिया था।" मि. जिन्ना की प्रतिक्रिया उस फौजी

---

1. मि. लेनार्ड मोसले: भारत में ब्रिटिश राज्य के अंतिम दिन-पृ. 16

नेता भी तो हुई जो सुलह के झण्डे को देखकर समझौते की बातचीत के लिए आया हो, पर अपने को पिस्तौल के सामने पा रहा हो। तुरंत भागा, फरेब, चिल्लाता हुआ वह छिपने की जगह ढूंढने लगा। खुद जी और अपने साथियों को यह समझाने में देरी नहीं लगी कि यह सारा कुछ एक बड़ी गलती थी। कैबिनेट मिशन की योजना मानकर, पाकिस्तान के अपने लक्ष्य से समझौता कर उन लोगों ने बुनियादी गलती की थी।"[1] नेहरू जी के बयान से पता चलता है कि उन्हें शायद जिन्ना और मुस्लिम लीग की ताकत का सही अंदाजा नहीं था।

27 जुलाई, 1946 को मुस्लिम लीग की बैठक हुई, जिसमें जिन्ना के कहने पर मुस्लिम लीग ने कैबिनेट मिशन की योजना को स्वीकृति को रद्द कर दिया गया। एक प्रस्ताव पास किया गया, जिसमें सभी मुस्लिम लीग के सदस्यों को अपनी उपाधि छोड़ने के लिए कहा गया और 16 अगस्त, 1946 "डायरेक्ट एक्शन डे" (सीधी कार्रवाई दिवस) के रूप में मनाने को कहा गया ताकि मुसलमान हिंदुस्तान के बंटवारे और अपनी पाकिस्तान की मांग का निश्चय प्रदर्शित कर सकें। "बंगाल के तत्कालीन प्रान्तीय मुख्यमंत्री श्री सुहरावर्दी ने उस दिन की छुट्टी घोषित करके, अप्रत्यक्ष रूप से, इन दंगों को और भड़का दिया। उसी दिन से कलकत्ता में जबरदस्त दंगे शुरू हो गये। यह खून - खराबा लगातार तीन दिन तक चलता रहा और उसमें लगभग बीस हजार लोग हताहत हुए। गलियां और सड़के लाशों से पट गयीं। यह सिलसिला यहीं

---

1. लियोनार्ड मोसले :- भारत में ब्रिटिश राज्य के अंतिम दिन-पृ. 17

TH-3316
DISS
O,152,3&aV,44:N47
152M9

खत्म नहीं होता बल्कि अक्तूबर, 1946 में पूर्वी बंगाल में नोआखाली आदि स्थानों पर बहुसंख्यक मुसलमानों ने, योजनाबद्ध रूप में अल्पसंख्यक हिंदुओं को बुरी तरह से मारा। बिहार में मुसलमानों का कत्लेआम हुआ। यह निर्मम और क्रूर सिलसिला रुका नहीं, संक्रामक रोग की तरह लाहौर और अमृतसर में भी फैलता चला गया। ये दंगे राजनीति और धर्म का घिनौना इस्तेमाल किए जाने के उदाहरण थे।"[1] इस प्रकार इन दंगों द्वारा यह साबित किया गया कि हिंदू और मुसलमान दो कौमें हैं जो एक राष्ट्र में नहीं रह सकती। इसलिए इनका आपसी शत्रुतापूर्ण और विद्वेषपूर्ण रवैया देखते हुए यही बेहतर होगा कि ये दोनों जातियां अलग-अलग हो रहें।

"जवाहर लाल नेहरू ने कहा कि बंटवारा अनिवार्य है और जो होना ही है उसका विरोध न करना ही बुद्धिमानी है।"[2] वल्लभ भाई पटेल तो खुले आम कहते थे कि बंटवारे के अलावा और कोई चारा नहीं रह गया है।"[3] महात्मा गांधी जो कि कहते थे, बंटवारा मेरी लाश पर होगा।" वे जब लार्ड माउंटबेटन से मुलाकात करके लौटे तो, उसके फौरन बाद सरदार पटेल उनसे मिलने गए और दो घण्टे से भी ज्यादा देर तक उनके साथ रहे। मैं नहीं जानता उनके बीच क्या बातचीत हुई, लेकिन जब मैं उनसे दुबारा मिला तो मुझे अपने जीवन का सबसे बड़ा आघात लगा क्योंकि मैंने पाया कि गांधी जी भी बदल गए थे। वे अभी खुले तौर पर

---

1. नरेन्द्र मोहन: दूसरा अंतर -पृ. 194-195
2. अब्दुल कलाम आजाद-आजादी की कहानी-पृ. 207
3. - वही - पृ. 208

बंटवारे के पक्ष में तो नहीं हुए थे पर वे उतने जोर से बंटवारे का विरोध नहीं कर रहे थे।"[1] गांधीजीने मि. जिन्ना के सामने प्रधान मंत्री का पद संभालने और संयुक्त भारत के लिए अपनी सरकार बनाने का प्रस्ताव रखा। किंतु गांधी जी इस प्रस्ताव को कांग्रेस पार्टी से न मनवा सके।

कांग्रेसी नेताओं को साम्प्रदायिक दंगों ने विचलित और विक्षुब्ध कर दिया था। "ये लोग बूढ़े हो गए थे। और थक गए थे। वे अपनी मौत के निकट आ गये थे, या कम से कम ऐसा उन्होंने सोचा जरूर हो होगा। यह भी सच है कि पद के आराम के बिना वे अधिक दिनों जिंदा भी नहीं रहे।"[2] इस विचलन, विक्षुब्धावस्था और वृद्धावस्था के कारण ही कांग्रेस अपने सिद्धांतों के विपरीत विभाजन को स्वीकार करने के लिए विवश हो गयी।

---

1. अब्दुल कलाम आजाद: आजादी की कहानी -पृ. 208
2. राम मनोहर लोहिया: भारत विभाजन के गुनहगार-पृ. 39

2. भारत-विभाजन के परिणाम:

माउंटबेटन, नेहरू और जिन्ना ने "विभाजन ही एक रास्ता है" ऐसा मन बनने पर रेडियो से बारी-बारी भाषण द्वारा देश की जनता को सम्बोधित किया। माउंटबेटन ने कहा-"एक सौ साल से भी ज्यादा हुआ, आप लाखों-करोड़ों की संख्या में साथ साथ रहे और उस देश का इकाई की तरह शासन हुआ।...समझौता असंभव रहा... किसी भी योजना पर जिससे देश की इकाई कायम रहे। लेकिन देश के एक हिस्से में जिसका बहुमत हो उसे देश के दूसरे हिस्से में औरों के बहुमत वाली सरकार के अधीन जबरदस्ती रखने का सवाल ही नहीं उठता। इस जबरदस्ती के बाद दूसरा रास्ता है-बंटवारा।"[1]

अपने भाषण में अत्यधिक खुशी का इज़हार न करते हुए भी माँ विभाजन के अलावा कोई अन्य योजना नेहरू जी के दिमाग में नहीं थी। उन्होंने कहा-"मैं बहुत खुशी से इस प्रस्ताव की सिफारिश नहीं कर रहा। हालांकि यह भी ठीक है कि मेरे दिमाग में इस बात पर कोई शंका नहीं कि इस समय यही सबसे अच्छा रास्ता है।"[2]

जिन्ना के लिए यह एक महान अवसर था, जिसको प्राप्त करने के लिए ही उन्होंने एक जिद्दी मुस्लिम नेता का रोल अदा किया था। किन्तु अपने भाषण में उन्होंने भीतरी ज़ज़बातों को काबू में रखते हुए ही संयत ढंग से कहा-"यह हम लोगों के लिए सोचने की बात है कि जो योजना बर्तानिया सरकार सामने रख रही है, उसे हम लोग समझौता-आखिरी सौदे के रूप में स्वीकार करें।"[3]

---

1. लिओनार्ड मोसले: भारत में ब्रिटिश राज्य के अंतिम दिन-पृ. 107
2. - वही - पृ. 107
3. - वही - पृ. 107

लाहौर तथा उसके आस-पास के क्षेत्रों में रहने वाले अधिकतर हिंदू सम्पन्न थे। हिंदुओं और सिखों के प्रतिनिधियों ने कांग्रेस को बहुत समझाया कि लाहौर को पाकिस्तान में न रहने दें, क्योंकि यह पंजाब के राजनीतिक और आर्थिक जीवन का केंद्र है। कांग्रेस ने इनकी सलाह न मानकर इसे आबादी की इच्छा पर छोड़ दिया। मार्च से ही लाहौर में दंगे भड़क उठे। लाहौर से होते हुए ये दंगे रावलपिंडी तथा आस-पास के इलाकों में फैल गए। रावलपिंडी में मुसलमानों ने बेरहमी से दो हजार सिखों का कत्ल किया। लाहौर दंगों का केंद्र बन गया। मुसलमानों ने हिंदुओं को आर्थिक रूप से कमजोर करने के उद्देश्य से उनकी जायदाद को नष्ट किया। उनके घरों तथा फैक्टरियों को जलाया और उनकी सम्पत्ति को लूटा। हिंदुओं का वहां कारोबार बड़ी मात्रा में था। वे मुसलमानों को मारकर उनमें भय उत्पन्न करना चाहते थे, ताकि लाहौर छोड़कर वे भाग जाएं और हिंदू अपना बहुमत सिद्ध कर सकें। एक पक्ष जायदाद पर हमला करता था दूसरा जान पर। दोनों ओर के नेता इन साम्प्रदायिक दंगों के पीछे रहकर एक दूसरे पर दंगे कराने का आरोप लगाते रहे।

ऐसी ही स्थिति कलकत्ता को लेकर पैदा हो गयी। मुस्लिम लीग वाले चाहते थे कि कलकत्ता पाकिस्तान में शामिल हो जाए, किंतु हिंदू जनता कलकत्ता को हिंदुस्तान में रहने देने के पक्ष में थी।

इससे पूर्व हिंदू-मुसलमानों के बीच पंजाब, कलकत्ता नोआखाली, बिहार और बंबई में दंगे हो चुके थे। दोनों पक्षों ने एक-दूसरे के खून खुलकर खून की होली खेली थी। ऐसा समय में लोगों की मानसिकता और तनावपूर्ण वातावरण का ध्यान न करके

बंटवारा करना, जिसमें लाखों की संख्या में लोगों को एक-दूसरे की सीमा से इधर-उधर आना और जाना होगा, बड़े पैमाने पर नर-संहार को बढ़ावा देना था। इस प्रकार की स्थिति न पैदा हो, इस ख्याल से अब्दुल कलाम आजाद ने माउंटबेटन को आगाह किया, उन्होंने आश्वासन देकर इस जिम्मेदारी को अपने ऊपर लिया -" कम से कम इस सवाल पर मैं आपको पूरा आश्वासन दे सकता हूँ। मेरी जिम्मेदारी है कि कोई खून-खराबी या दंगे न हों। मैं सैनिक हूँ, असैनिक नहीं।.. मैं आदेश निकालकर इस बात की व्यवस्था करूंगा कि देश में कहीं भी साम्प्रदायिक दंगे न हों। अगर कहीं जरा सी भी गड़बड़ हुई तो मैं कड़ी कार्यवाही करके उसे शुरू में ही दबा दूंगा। मैं सशस्त्र पुलिस का भी उपयोग न करूंगा। मैं सेना और वायुसेना से काम लूंगा और जो गड़बड़ करने की कोशिश करेगा उसे दबाने के लिए मैं टैंकों और हवाई जहाजों का इस्तेमाल करूंगा"।[1]

नफरत और साम्प्रदायिकता की आग भड़काने वाला प्रचार खुले आम किया जा रहा था। जिसमें कहा जा रहा था कि पाकिस्तान में रह रहे हिंदुओं को डरने की जरूरत नहीं। क्योंकि पाकिस्तान में बनने के बाद वहां साढ़े चार करोड़ मुसलमान रह जाएंगे अगर हिंदुओं पर अत्याचार हुआ तो उसका फल हिंदुस्तान के मुसलमानों को भुगतना पड़ेगा।

यह तो तय था कि पंजाब और बंगाल का क्षेत्र ही पाकिस्तान में जाएगा। मई में देश के बंटवारे की घोषणा की जा चुकी थी। आजादी का दिन 15 अगस्त रखा जा चुका था। दोनों उपनिवेशों

----

1. मौलाना अब्दुल कलाम आजाद: आजादी की कहानी-पृ. 212

की सीमा-रेखा कहाँ और कैसे निर्धारित होगी इसका देशवासियों को वेभी तक पता नहीं था । जबकि सीमा-रेखा भी ऐसे क्षेत्रों में खींची जानी थी , जहाँ हिंदुओं और, मुसलमानों की आबादी लगभग समान थी ।

जून के अन्त में बाऊंडरी कमीशन का गठन किया गया । सर सिरिल रेडक्लिफ को दोनों उपनिवेशों की सीमा-रेखा तय करने का कार्य सौंपा गया । वे भी कार्य करने के लिए 8 जुलाई, 1947 को दिल्ली पहुंचे । हिंदुस्तान की लगभग पैंतीस करोड़, आबादी में से उन्हें लगभग आठ करोड़ अस्सी लाख लोगों के घर-बार, जीविका और राष्ट्रीयता का फैसला केवल पांच सप्ताह के भीतर करना था ।

रावल पिंडी में सिखों के कत्ल से खिन्न और क्रोधित होकर सिखों का बुजुर्ग, बुद्धा कूटनीतिज्ञ और सलाहकार मास्टर तारा सिंह सामने आया । वह बंटवारे का विरोधी था, किंतु साथ ही दोनों उपनिवेशों में से कुछ हिस्से निकालकर एक स्वतंत्र सिख राज्य की स्थापना भी करना चाहता था । उसने अमृतसर के स्वर्ण-मंदिर में सिखों के बीच भाषण दिया- "सिख भाइयों । आपको पता होना चाहिए पश्चिम में हमारे भाइयों पर उन लोगों का खतरा है जो हमें काफिर कहते हैं । हमारी जमीनें कुचल दी जाने वाली हैं , हमारे बच्चों को गलत और विरोधी प्रतिज्ञा करनी पड़ सकती है । फिर समय आ गयाहै कि हमारे बहादुर उठ खड़े हों और मुगल हमलावरों को मार भगाएं । रावलपिंडी को याद न भूलों । हमें अपने लोगों का बदला लेना है । हमारी जमीन पर हमारे अधिकारों के रास्ते में जो भी आये उसे न छोड़ों ।" ।

---

1. लिओनार्ड मोसले: भारत में ब्रिटिश राज्य के अंतिम दिन-पृ. 175

कांग्रेस और मुस्लिम लीग, दोनों ने सत्ता मिल जाने पर अल्पसंख्यकों के साथ न्यायोचित और बराबरी के व्यवहार का जिम्मा लिया । पंजाब में शांति बनाये रखने के लिए दोनों सरकारों ने एक अगस्त से खास फौजी कमाण्ड स्थापित करने का फैसला किया जिसे सियालकोट, गुजरांवाला, शेखुपुरा, लायलपुरा, मोंटगुमरी, लाहौर, अमृतसर, गुरदासपुर, होशियारपुर, जालंधर, फिरोजपुर और लुधियाना के जिलों में काम करना था । दोनों सरकारों की सहमति से इसका फौजी कमाण्डर मेजर जनरल रीस नियुक्त किया गया और भारत की ओर से ब्रिगेडियर दिगम्बर सिंह तथा पाकिस्तान की ओर से कर्नल अयूब खान उसके सलाहकार नियुक्त किये गए ।

बाउंडरी कमीशन के फैसले के पूर्व जो उपद्रव अब हो रहे हैं, फैसला आने पर उनका रूप उबलकर खास जगहों पर आ जाएगा । जिसको नियन्त्रित करने के लिए वायसराय ने पंजाब बाउंडरी फोर्स में 50,000 की सेना बनाकर अपने विचार में स्थिति को काबू में कर लिया था ।

30 जुलाई को बंगाल की स्थिति का जायजा लेने के लिए वायसराय वहां गया । ले. जनरल टकर से उन्होंने पूछा कि क्या उसे भी सीमा फौज की जरूरत है या नहीं ? टकर ने सेना लेने से इंकार किया और आश्वासन दिया कि कोई अशान्ति यहां नहीं फैलेगी तथा पिछले वर्ष की तरह खून-खराबा दोहराया नहीं जाए गा । टकर अपने को उपद्रव का सामना करने के लिए समर्थ समझता था और इसमें कोई शक नहीं कि वह कर्मठ, चालाक और अडिग फौजी बिना किसी बाहरी सहायता के अपने इलाके को साम्प्रदायिक दंगों से अलग रखने के लिए कटिबद्ध था । लेकिन एक सहायता मोहनदास गांधी

के रूप में वहां आयी । एक आदमी की सीमा फौज जो बंदूकों और हथियारों बंद गाड़ियों से लैस 50,000 सिपाहियों से भी ज्यादा पुरअसर साबित हुई ।

गांधीजी इससे सदा बंटवारे के खिलाफ ही रहे । उनका विश्वास था कि नेहरू और पटेल ने हिंदुस्तान के बंटवारे को मानकर गलती की है । इसलिए वे दिल्ली या करांची के "उत्सव" में शामिल नहीं होना चाहते थे । उनके लिए यह मातम का दिन था । गांधी जी का इरादा नोआखाली में रहने का था, जहां पिछले वर्ष हिंदुओं पर बहुत अत्याचार हुए थे ।

बंगाल के गवर्नर सर फ्रेडरिक, मुसलमानों के प्रतिनिधि मंडल और स्वयं सुहरावर्दी ने गांधी जी से आग्रह किया कि वे कलकत्ता में रहें, क्योंकि यहां दंगे होने की संभावना अधिक है । गांधी जी ने यह आश्वासन मिलने पर कि नोआखाली में हिंदुओं की सुरक्षा की जिम्मेदारी स्वयं मुसलमानों के प्रतिनिधि मंडल ने ली है । तब वे कलकत्ता में रहने के लिए तैयार हो गये । गांधी जी की शर्त पर सुहरावर्दी भी उनके साथ रहे ।

गांधी जी के कलकत्ते में आने के बाद सिर्फ 24 घंटे बाद ही 5,000 हिंदुओं और मुसलमानों का एक साथ जुलूस निकला और नारे लगाए गए - हिंदू-मुस्लिम एक हों, हिंदू-मुस्लिम भाई-भाई ।

लेफ्टिनेंट जनरल टकर की गुरखा और अंग्रेज फौज एकदम तैयार थी, लेकिन उसकी जरूरत ही नहीं पड़ी । कलकत्ते में जिन अंग्रेजों ने एक साल पहले वहां का कत्ल देखा था उन्होंने हिंदुओं और मुसलमानों को गले मिलते देखा । माउंटबेटन ने इसके बारे में लिखा -"पंजाब में हमारे साथ 50,000 सिपाही हैं लेकिन दंगे भी ।

बंगाल में सिर्फ एक आदमी की फौज है और कोई दंगा नहीं। काम करने वाले एक अफसर और प्रशासक की हैसियत से इस एक आदमी की सीमा फौज के प्रति मैं सम्मान प्रकट कर सकता हूँ। कमाण्डर का दूसरा आदमी सुहरावर्दी भी इसमें शामिल है।"[1]

पंजाब के सिखों ने अगस्त के दूसरे सप्ताह में हमले शुरू कर दिए। उन्होंने महसूस किया कि सीमा-रेखा चाहे जहां भी खींची जाए, बंटवारे की चोट उन्हें ही सहनी पड़ेगी। बंटवारे के दर्द से वे कराह रहे थे उसका एक ही इलाज उन्हें सूझता था-कत्ल, कत्ल, कत्ल। यह कत्ल योजनाबद्ध भी था और साथ ही साथ अंधा और पागलपन से भरा भी। वे मुसलमानों की अपेक्षा और हथियारों से ज्यादा लैस थे। उनका धार्मिक चिन्ह कृपाण बदला लेने का हथियार बन गया। उन्होंने भाले, कुल्हाड़ियां और भोंडे किस्म के बम-गोले भी तैयार किए। हमला करने के लिए उन्होंने कई जत्थे तैयार किए, जिनकी संख्या बीस-तीस आदमियों से लेकर पांच-छःसौ से भी ज्यादा होती थी। लेकिन खास मौकों पर जब उन्हें किसी एक गांव या रेलगाड़ी या मुसलमानों के बड़े काफिले पर हमला करना होता था तो गांव के लोग भी उसमें शामिल हो जाते जिससे उनकी संख्या हजारों तक पहुंच जाती थी। "जत्थों में होशियार लड़ाकों की जमात थी जो राइफल, बम, टौमी गन और मशीनगनों से लैस थे। मुसलमानों के पास भी मुस्लिम लीग नेशनल गार्ड के रूप में सीखे हुए लोग थे लेकिन सिखों की तरह साथ काम करने की भावना उनमें नहीं थी।"[2]

----

1. - वही - पृ. 183
2. - वही - पृ. 191

सिखों के इस प्रकार योजनाबद्ध तरीके से हमले किये जाने से मुसलमानों ने भी जवाबी कार्रवाई में सिखों को मौत के घाट उतारना शुरू किया। क्योंकि अधिकांश सिख पश्चिम पंजाब में ही थे। प्रत्येक मुसलमान के कत्ल के साथ सिखों को उसका फल भुगतना पड़ा। यह हिंदू और मुसलमान के बीच की लड़ाई नहीं थी। यह लड़ाई थी सिख और मुसलमानों के बीच।

ऐसे समय में कांग्रेस की ओर से नेहरू और मुस्लिम लीग की ओर से जिन्ना ने कोई बीच-बचाव नहीं किया। ऐसा तो हो ही नहीं सकता कि उनको इसकी खबर न हो। माउंटबेटन अगर दोनों पक्षों से कहते तो भी इसका नतीजा अच्छा ही निकलता। स्वाधिनता दिवस से पहले ही हालत के बारे में एक सरकारी विज्ञप्ति जो अब तक प्रकाश में नहीं आई यों है-"हालांकि कभी-कभी हिंदू समुदाय के लोगों को बहुत नुकसान उठाना पड़ा लेकिन बदले की इस लड़ाई में उन लोगों ने बहुत ही छोटा पार्ट अदा किया।.. किसी भयानक धुगबंदी के साजों की तरह अमृतसर के मुसलमानों और लाहौर के सिखों की चीख-पुकार उन गलियों में गूंजने लगी। सतलज और व्यास के बीच पाले उस जरखेज इलाके मांझा में जो सिखों का गढ़ था, सिखों के पहले जत्थे गांवों के मुसलमानों का सफाया करने के लिए सामने आये। दिन-ब-दिन कत्ल का यह सिलसिला जोर पकड़ता गया। लाहौर के उत्तर में स्थित गुजरांवाला में मुसलमानों ने जवाबी हमला किया और सैकड़ों सिख मौत के घाट उतारे गये। मध्य पंजाब के सभी हिस्सों से तबाही और बरबादी की दर्दनाक कहानियां आने लगी।"[1]

---

1. वही - पृ. 191-192

मौलाना अब्दुल कलाम आजाद से माउंटबेटन ने जो वायदा किया था कि किसी हिंदू, सिख या मुसलमान का वह बाल भी बाँका नहीं होने देगा, वह सिर्फ मुंह चिढ़ाना साबित हुआ। पहली अगस्त को स्थापित पंजाब बाउंडरी फोर्स क्रूर एवं सशस्त्र लोगों द्वारा असहाय स्त्री, पुरुष और बच्चों को मारे जाने से नहीं बचा सकी। "इस फोर्स में ब्रितानी अफसर बहुत बड़ी संख्या में था और यही इसकी विफलता का कारण भी बना। इन अफसरों की दिलचस्पी ब्रिटेन वापस लौटने में थी, न कि फौजी कारवाई में, क्योंकि तब उपमहाद्वीप में कुछ समय के लिए और रहना पड़ता। ब्रितानी कमाण्डर जनरल रीस को यह आदेश था कि वह अपने को अधिक उलझाये नहीं और केवल "यूरोपवासियों के जीवन" की सुरक्षा पर ध्यान दे।"[1]

पंजाब बाउंडरी फोर्स ने अपनी रिपोर्ट में उस हालात का जिक्र इस प्रकार किया- "सभी जगह मध्यकालीन युग की तरह नृशंस हत्याएं की गयीं। आयु या स्त्री-पुरुष का भेद नहीं किया गया, बांहों में बच्चों को थामे मांए काट दी गयी, भाले से भेद दी गयीं या गोली से उड़ा दी गयीं.. दोनों पक्ष समान रूप से निर्मम थे।"[2]

आजादी का दिन, भारत और पाकिस्तान, दो देशों के लिए खुशियों का दिन हो सकता था, किन्तु जिन दोनों ओर के लोगों ने आजादी द्वारा आयी विपदा पर अपना सब कुछ होम कर दिया था, उनके लिए यह शोक-दिवस था। आजादी के दिन का उत्सव, जिसका लोग बड़ी बेसब्री से इंतजार कर रहे थे, 14 अगस्त

---

1. कुलदीप नय्यर: दूर के पड़ोसी- पृ. 43-44
2. -वही- पृ. 43

को पाकिस्तान ने और 15 अगस्त को भारत ने मनाया ।

"उसी दिन सुबह अमृतसर के बाजार में सिखों ने मुसलमान लड़कियों और औरतों के बड़े समूह को घेर लिया, उनको नंगा कर दिया और चारों ओर से शोर ... मचाती हुई भीड़ के सामने चक्कर लगवाया । फिर जो अच्छी और जवान थीं उन्हें खींचकर उनके साथ लगातार बलात्कार किया गया और बाकियों को कृपाण से कत्ल कर दिया गया ।

उसी दिन शाम को लाहौर के मुसलमानों ने प्रमुख गुरुद्वारे पर हमला किया । सैकड़ों सिखों ने वहां शरण ली थी।... गुरुद्वारे में आग लगा दी गयी । उनके चंगुल में फंसे लोगों की बेपनाह चीख-पुकार गूंजने लगा ।"[1]

इन्हीं दिनों लाशों से भरी गाड़ियां लाहौर आतीं और उन पर लिखा होता - भारत की ओर से उपहार । इसी तरह पाकिस्तान से आने वाली गाड़ियों में सिखों को कत्ल कर उस पर लिखा होता- पाकिस्तान की ओर से उपहार ।

पश्चिमी पंजाब के लाखों गैर मुसलमान और पूर्वी पंजाब के लाखों मुसलमान इस उम्मीद में भी रुके रहे कि सीमा-रेखा का फैसला उनके पक्ष में होगा । रेडक्लिफ ने बाउण्डरी कमीशन की रिपोर्ट तैयार करके आजादी के नियत दिन से कई दिन पूर्व ही माउंटबेटन को थमा दी थी । माउण्टबेटन उसे आजादी के दो दिन बाद तक अपनी जेब में ही रखे रहे ।

---

1. लियोनार्ड मोसले: भारत में ब्रिटिश राज्य के अंतिम दिन - पृ. 197

17 अगस्त, 1947 को बाउण्डरी कमीशन के फैसले को प्रकाशित किया गया । इसके प्रकाशित होते ही सिख गुस्से से पागल हो गए । उन पर बाउण्डरी कमीशन के फैसले का वज्रपात हुआ । उनकी जमीन, नहरें, उपजाऊ और धनी इलाके के बीच उनका घर, सब कुछ पाकिस्तान की सरहद के भीतर चला गया । लोग अपने ही घर और धरती से बेगाने हो गए थे । वे अजनबियों की तरह शरणार्थियों के रूप में अपने देश की सीमा के भीतर पहुंचने के लिए बड़े-बड़े काफिलों में चलने लगे । काफिले जब चलते तो लोगों की संख्या ज्यादा होती, किंतु रास्ते उन पर अनेक योजना-बद्ध तरीके से हमले होते और अपने देश की सीमा में पहुंचते-पहुंचते उनकी संख्या बहुत कम रह जाती । अनेकों को अपने भाइयों, मां, पिता, बहिनों, पत्नी, बच्चों और संबंधियों से हाथ धोने पड़ते । इस प्रकार ये शरणार्थी अपने जान माल की हानि उठाकर अपने देश पहुंच रहे थे । उनको दुबारा से अपनी जिंदगी और कारोबार की शुरूआत करने के लिए अनेकों कठिनाईयों और मुसीबतों का सामना करना पड़ा ।

"अगस्त, 1947 से लेकर नौ महीने बाद तक लगभग एक करोड़ साठ लाख हिंदुओं सिखों और मुसलमानों को घर बार छोड़कर खून की प्यासी भीड़ से बचने के लिए भागना पड़ा । उसी अरसे में ०००,000 लोग मारे गये । नहीं, सिर्फ मारे नहीं गए । बच्चों की टांग पकड़कर दीवारों पर पटक दिया गया, लड़कियों के साथ बलात्कार हुआ और उनकी छातियां काट दी गईं । गर्भवती औरतों के पेट चीर दिये गए ।" [1]

---

1. - वही - पृ. 198

दूसरा अध्याय :-

भारत विभाजन सम्बंधी कहानियों का सामान्य परिचय:-

:भारत-विभाजन सम्बंधी कहानियों का सामान्य परिचय:-

भारत-विभाजन की दुर्घटना इस देश के इतिहास में अभूतपूर्व थी। लाखों लोग इससे प्रभावित हुए। मानवीय संबंधों एवं मानवीय मूल्यों में टकराव तथा परिवर्तन पैदा हुए। मानवीय-कृत्यों की पहचान एवं उनको फिर से परिभाषित करने की, इन कहानियों में तटस्थ और वैचारिक धरातल पर निष्पक्ष दृष्टि अपनाई गई है।

इस अध्याय में जिन कहानियों का सामान्य-परिचय दिया गया है, वे इस प्रकार हैं-"दिल्ली की बात","ईश्वर द्रोही", ¤पाण्डेय बेचन शर्मा"उग्र"¤"चारा काटने की मशीन","टेबल लैंड" ¤उपेंद्रनाथ अश्क¤"कानून","खुदा खुदा की लड़ाई"¤यशपाल¤ "नारंगिया",शरणदाता", लेटर बाक्स","मुस्लिम-मुस्लिम भाई-भाई, रमते तत्र देवता","बदला",¤अज्ञेय¤"अंतिम इच्छा", "परदेसी" ¤बदीउज्जमां¤ "मेरा वतन", " मैं जिंदा रहूंगा"¤विष्णु प्रभाकर¤ ¤क्लेम","परमात्मा का कुत्ता","मलबे का मालिक"¤मोहन राकेश¤ "मेरी मां कहां", "सिक्का बदल गया"¤कृष्णा सोबती¤ "अमृतसर आ गया है¤भीष्म साहनी¤ "कितने पाकिस्तान"¤कमलेश्वर¤ ¤पानी और पुल"¤महीप सिंह¤"व्यथा का सरगम"¤अमृतराय¤"मुक्ति" ¤देवेंद्र इस्सर¤ और "मामूली लोग"¤अरुण कुमार¤।

मोहन राकेश कृत "मलबे का मालिक" कहानी मानवीय संबंधों की पीड़ा, क्रूरता एवं करुणा को दर्शाती है । विभाजन के साढ़े सात वर्ष बाद पाकिस्तान के मुसलमानों की एक टोली अमृतसर में हाकी का मैच देखने के लिए आती है । विभाजन द्वारा दोनों ओर के नगरों में आये बदलाव को ये टोली महसूस करती है । इसमें एक बुढ़ा मुसलमान गनी मियाँ भी हैं । वह अपना विभाजन पूर्व बनवाया मकान देखने के लिए आता है । उसे वहीं पता चलता है कि बाजार बासाँ की भयानक आग में उसका मकान जल गया था तथा उसका बेटा चिराग और उसके बीवी-बच्चे मारे गये थे जबकि चिराग को रक्खा पहलवान पर अटूट विश्वास था । उसने ही चिराग और उसके बीवी-बच्चों की हत्या की थी । गनी मियाँ जब गली में आता है तो अपने मकान के मलबे को पहचान लेताहै, उस जमीन से लगाव के कारण वह फूट-फूटकर रोने लगता है । वह रक्खा पहलवान से प्यार से मिलता है, किंतु रक्खा पहलवान अपने को गनी मियाँ के सामने अपराधी महसूस करताहै-"उसके होंठ सूख रहे थे और उसकी आँखों के इर्द-गिर्द दायरे गहरे हो गए थे ।"[1] गनी मियाँ का उसके प्रति सहज विश्वास मानवीय करुणा को उभारता है-"मेरे लिए चिराग नहीं तो तुम लोग तो हो । मुझे आकर इतनी ही तसल्ली हुई कि उस जमाने की कोई तो यादगार है । मैंने तुमको देख लिया तो चिराग को देख लिया ।"[2] यह आत्मीयता और रक्खा पहलवान द्वारा की गयी चिराग की हत्या स्थितियों की विडम्बना को उभारती है।

---

1. सं. अनीता राकेश: मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियाँ-पृ. 230
2. - वही - पृ. 230

मोहन राकेश की कहानी "क्लेम"[1] जिन शरणार्थियों की सम्पत्ति भारत-विभाजन के दौरान पश्चिमी पाकिस्तान में छूट गयी थी, सरकार उन शरणार्थियों के क्लेम फार्म भरवा रही थी और मुआवजे के तौर पर उनको पैसा दे रही थी। क्लेम स्वीकार करने वाला दफ्तर सभी जिलामें नहीं था बल्कि केवल जालंधर में ही था। इस क्लेम की पैरवी के लिए लोगों को दूर - दूर से आना पड़ता था। अनेकों कठिनाइयों के बावजूद लोगों को अपनी सम्पत्तियों का समुचित मुआवजा नहीं मिल सका। साधु सिंह के तांगे में तीन सवारियां क्लेम दफ्तर जाने के लिए बैठी हैं। उनकी बातें साधु सिंह सुनता है। वे अपनी - अपनी सम्पत्ति के एवज में बहुत कम पाने पर झुंझलाते हैं और सरकार द्वारा की जा रही धांधली को कोसते हैं। साधु सिंह उन शरणार्थियों का प्रतिनिधित्व करता है जिनका मुआवजा सरकार किसी भी कीमत पर अदा नहीं कर सकती। बात आने पर उसको क्लेम भरने को कहा गया। उसका विवरण निम्न प्रकार है :-

नाम, साधु सिंह।
वल्द, मिलखा सिंह।
कौम, खत्री।
जमीन जायदाद, कोई नहीं।
रुपया पैसा, कोई नहीं।
क्लेम ..?" [1]

----

1. - वही - पृ. 112

वह पश्चिमी पाकिस्तान में पत्तोकी में अपनी पत्नी के साथ किराए के मकान में रहता था । दंगे शुरू होने पर वह वहाँ से भाग निकला किन्तु उसकी पत्नी दंगाइयों के हाथ लग गयी । इसीलिए वह क्लेम नहीं भर सका । उसकी भरपाई किसी भी क्लेम से संभव नहीं हो सकती । कहानी में क्लेम की प्रक्रिया पर व्यंग्य किया गया है ।

मोहन राकेश की "परमात्मा का कुत्ता" कहानी में शरणार्थियों के पुनर्वास से सम्बद्ध सरकारी दफ्तरों में व्याप्त लालफीता शाही, भ्रष्टाचार, विलम्बकारी बातों, निठल्लापन आदि के चित्रण के साथ - साथ एक व्यक्ति के माध्यम से उन लोगों के कष्टों को वाणी दी गई है, जो अनेक वर्षों तक सरकारी दफ्तरों में अपने केस की पैरवी के लिए दूर - दूर से चलकर आते हैं और उनके केस की फाइल एक मेज़ से दूसरी मेज़ तक सरकती रहती है, किंतु कार्रवाई के नाम पर उनको कुछ हासिल नहीं होता । इस वजह से लोगों की तकलीफें बढ़ती ही जाती है, कम होने का नाम नहीं लेती ।

एक अधेड़ व्यक्ति जो दो साल से लगातार सिर्फ इसलिए इस दफ्तर के चक्कर लगा रहा है कि उसको एलाट हुई गड्ढे वाली जमीन के बदले दूसरी जमीन दी जाए । उसके साथ उसके भाई की विधवा है जिसकी विवाह योग्य लड़की तथा टी•बी• का मरीज एक लड़का भी है । वह व्यक्ति दफ्तर के अहाते में बैठकर जोर - जोर से बोलकर दफ्तरी काम - काज का भंडा फोड़ करना शुरू करता है । उसको चुप कराने के

उद्देश्य से बाबू आते हैं, जिनको वह कहता है-"तुम सब के सब कुत्ते हो, तुम सब भी कुत्ते हो और मैं भी कुत्ता हूँ। फर्क सिर्फ इतना है कि तुम लोग सरकार के कुत्ते हो, हम लोगों की हड्डियाँ चूसते हो और सरकार की तरफ से भौंकते हो। मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ। उसकी दी हुई हवा खाकर जीता हूँ और उसकी तरफ से भौंकता हूँ।...साले आदमी के कुत्ते, झूठी हड्डी पर मरने वाले कुत्ते। दुम हिला-हिला कर जीने वाले कुत्ते।"[1]

कमिश्नर उसे अपने साथ भीतर ले गया। वह आधे घण्टे में मुस्कराता हुआ बाहर निकला, लोगों की भीड़ को सम्बोधित करके बोला-"चूहों की तरह बिटर-बिटर देखने से कुछ नहीं होता। भौंको, भौंको, सबके सब भौंको। अपने-आप सालों के कान फट जाएंगे।"[2]

लेखक ने इस कहानी में व्यवस्था-विरोधी आक्रोश को पूरी तरह से प्रकट किया है तथा सरकार की टालमटोल की नीति पर व्यंग्य किया है।

अज्ञेय कृत "शरणदाता" कहानी में अपने पड़ौसी और दोस्त के प्रति बाहरी परिस्थितियों का दबाव उनके रिश्तों को किस तरह से बदलने के लिए मजबूर कर देता है, साथ ही साथ ऐसी विरोधी स्थितियों में भी अनदेखे चेहरे कितने मानवीय

---

1. - वही - पृ. 324
2. - वहीं - पृ. 326

हो उठते हैं, यही इस कहानी में दिखाया गया है ।

रफीकुद्दीन अपने पुराने घनिष्ठ दोस्त देविंदरलाल को दंगों के दिनों हिंदुस्तान नहीं जाने देता उसकी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेता है तथा उसे अपने घर में रखता है । "विषाक्त वातावरण, द्वेष और घृणा की चाबुक से तड़फड़ाते हुए हिंसा के घोड़े, विष फैलाने को सम्प्रदायों के अपने संगठन और उसे भड़काने को पुलिस और नौकरशाही।"[1] इसप्रकार के वातावरण में व्यक्ति अपना आत्म विश्वास और आत्मबल गंवाने लगता है । आंतरिक जगत में होने वाले परिवर्तन को देविन्दरलाल महसूस करता है कि रफीकुद्दीन के स्वर में उसके प्रति रुखाई झलकने लगी है । देविन्दर लाल को शेख उताउल्लाह के अहाते में बनी गैराज में चला जाना पड़ता है । वहां उन्हें खाने में जहर दिया जाता है किंतु शेख साहब की लड़की जेबु के कारण वे बच जाते हैं । शरण में आए हुए व्यक्ति की रक्षा का धर्म उस माहौल में भी जेबु निभा जाती है । वह यही इल्तजा करती है कि "आपके मुल्क में अकलीयत का कोई मज़लूम हो तो याद कर लीजियेगा । इसलिए नहीं कि वह मुसलमान है, इसलिए कि आप इंसान हैं ।"[2]

अज्ञेय कृत "लेटर बाक्स" कहानी में एक पांच वर्षीय रोशन नामक बच्चा अपने मां - पिता के साथ पश्चिमी पाकिस्तान से शरणार्थियों की टोली में चला था । रास्ते में उसके बाबूजी उसकी बुआ - फूफा को लाने तथा लाहौर में मिलने की कह कर चले गए ।

---

1. अज्ञेय :- ये तेरे प्रतिरूप : पृ. 45
2. - वही - पृ. 54

रास्ते में उनकी टोली पर मुसलमानों द्वारा हमले होते हैं। वे लाहौर न जाकर दूसरी ओर से मुड़ जाते हैं। दूसरे दिन उन पर फिर हमला होता है, जिसमें अनेक लोगों की जाने जाती हैं। औरतों का अपहरण होता है। रोशन की माँ के विरोध करने पर भी उसकी हत्या कर दी जाती है। रोशन को एक व्यक्ति जालंधर में लगे कैम्प तक ले आया।

अब वह अपने बाबू जी तक चिट्ठी पहुँचाना चाहता है। कथावाचक अपनी चिट्ठियों को लेटर - बाक्स में डाल रहा था, तभी उसे रोशन वहाँ खड़ा दिखाई देता है। उसके हाथ में बिना पता लिखा एक पोस्ट कार्ड था। कथावाचक उससे उसके तथा उसके परिवार के बारे में जानकर भी किसी प्रकार भी उस पोस्ट कार्ड को उसे बाबूजी तक पहुँचा पाने में असमर्थ है, क्योंकि रोशन शेखूपुरा से वह अपने बाबूजी के साथ चला था और बूआ - फूफा के गाँव में उसके बाबूजी बैठे थोड़े ही होंगे। यह तर्क देकर वह कहता है-
"..तुम कुछ नहीं जानते बाबू साहब। लाओ मेरी चिट्ठी मुझे दो।"1

कथावाचक यही सोचता हुआ लौट आया-"शायद मेरी चिट्ठी छोड़ने के बाद जो चिट्ठी छोड़ने आये वह मुझसे अधिक जानता हो और उसे बता दे कि वह किस पते पर छोड़े ताकि वह बाबूजी को मिल जाए।" 2

----

1. अज्ञेय : ये तेरे प्रतिरूप : पृ. 59
2. - वही - पृ. 59

अज्ञेय कृत "नारंगियां" कहानी दो शरणार्थी भाइयों की कहानी है । वे अपनी सारी जायदाद गवाँ कर आये हैं और एक मुहल्ले के सिरे की पुरानी दीवार की मेहराब को ही द्वार बना कर रह रहे हैं । वे अभावग्रस्त हैं, आजीविका का कोई साधन नहीं है । किसी से हाथ पसारकर भीख भी नहीं माँगते । वे आस-पड़ोस में संदेह के पात्र हैं -"दोनों भाई अगर कुछ लेकर नहीं आये और कुछ कमाते भी नहीं हैं, तो चोरी के बिना कैसे काम चलता होगा, हाँ, चोर जैसे दीखते भी नहीं थे !"[1]

एक दिन हरसू वहीं नारंगियाँ सजाकर दुकान कर लेता है। उस मोहल्ले में गरीबी ने डेरा डाला हुआ है । बच्चे ललचाई नज़र से नारंगियों को देख तो सकते हैं, किंतु खरीदने की उनकी सामर्थ्य नहीं है । हरसू एक छोटी लड़की को, जो नारंगियों को हसरत भरी निगाह से देख रही थी, दो नारंगियाँ देता है । उस पर उसका भाई परसू नाराज होता है-"हाँ-हाँ, बाप का माल है, दे दे । कल देखूँगा, कहा से माल लाएगा और दुकान चलाएगा ।"[2] एक लड़का हरसू से खरीदकर नारंगी खाता है, तो अनेक बच्चे उसके मुँह की ओर ताकते हैं । परसू से नहीं रहा जाता । वह हरसू को अपनी जेब से पैसे देकर उन सब बच्चों को नारंगियाँ दिलवाता है ।

---

1. - वही - पृ. 23
2. - वही - पृ. 25

नारंगियाँ बेचकर वे अपने अभावग्रस्त जीवन से छुटकारा पाना तो चाहते हैं किन्तु साथ ही साथ उनके भीतर दया, ममता आदि मानवीय गुणों को भी देखा जा सकता है ।

"मुस्लिम-मुस्लिम भाई-भाई" कहानी में अज्ञेय ने इस्लाम धर्म की इस मान्यता के खोखले पन को उघाड़ा है, कि इस्लाम में सब समान हैं, ऊंच-नीच का कोई फर्क नहीं है और कोई वर्ग भेद नहीं है ।

सरदारपुरे में लोग शान्ति से रह रहे थे । वहाँ अखबार के माध्यम से मार-काट, दंगे-फसाद और भगदड़ की खबरे कई दिनों से आ रही थी । यहाँ कुछ शरणार्थी भी आ चुके थे । दूसरे स्थानों से इधर और उधर जाने वाले काफिले कूच कर रहे थे । पर सरदारपुरे में अशान्ति, भय और आतंक की लहर रोजाना अखबार में छपी खबर से आयी- "अफवाह है कि जाटों के कुछ गिरोह इधर-उधर छापे मारने की तैयारी कर रहे हैं ।"[1] इस खबर के पंख लग गये और बहुत कुछ जुड़ता चला गया-"जाटों का एक बड़ा गिरोह हथियारों से लैस, बंदूक के गाजे-बाजे के साथ खुले हाथों मौत के नये खेल की पर्चियाँ लुटाता हुआ सरदारपुरे पर चढ़ा आ रहा है ।"[2] सरदार पुरे में इस खबर से भगदड़ मच गयी ।

लोगों की बहुत-सी भीड़ पाकिस्तान जाने वाली गाड़ी में ठसाठस भर कर चली गयी । बहुत से लोग, जिनको पहली गाड़ी में जगह नहीं मिली थी, दूसरी स्पेशल गाड़ी का जो दिल्ली से पाकिस्तान जा रही थी, इंतजार करने लगे ।

----

1. - वही - पृ. 60

2. - वही - पृ. 60

इनमें तीन अधेड़ उम्र की महिलाएं भी थीं । उनमें संशय था कि स्पेशल गाड़ी में उनको बैठने भी दिया जाएगा या नहीं। इस पर एक कहती है-"आखिर तो मुसलमान होंगी-बैठने क्यों नहीं देंगे ?" ।

काफी इंतजार के बाद गाड़ी आती है । तीनों स्त्रियाँ जनाने डिब्बे में घुसने का प्रयत्न करती हैं, किंतु भीतर सैकण्ड क्लास में बैठी स्त्रियाँ उनको दुतकार देती हैं । वे गिड़गिड़ाती हैं-"...हम तो यहाँ से जाना चाहते हैं जैसे भी हो । इस्लाम में तो सब बराबर हैं ।"[2] उनके मुसलमान होने की दुहाई भी बेअसर जाती है "सकीना ने तड़पकर कहा," कुछ तो खुदा का खौफ करो । हम गरीब सही पर कोई गुनाह तो नहीं किया ..."[3]

भीतर से स्त्री कहती है-"बड़ी पाकदामन बनती हो । अरे, हिंदुओं के बीच में रहीं, और अब उनके बीच से भागकर जा रही हो, आखिर कैसे ?...सौ-सौ हिंदुओं से ऐसी-तैसी कराके पल्ला झाड़ के चली आई पाकदामनी का दम भरने.."[4] आखिर ट्रेन चली ही जाती है ।

मुसीबत के वक्त धर्म के सिद्धांतों को भी ताक पर रखा जा सकता है, यह इस कहानी में बखूबी प्रतिपादित किया गया है ।

---

1. - वही - पृ. 61
2,3,और 4 - वही - पृ. 64

"..रमते तत्र देवता:" अज्ञेय की इस कहानी का शीर्षक ही व्यंग्यात्मक है । जहाँ नारी की पूजा होती है, वहाँ देवता वास करते हैं । ऐसी धारणा हिंदू समाज में होते हुए भी परिस्थितियों को अनदेखा कर हिंदू समाज के प्रति अपनी स्त्री को केवल इसलिए घर से निकाल देते हैं कि वह एक रात किसी गैर मर्द के घर रह कर आयी है । इस कहानी में हिंदू समाज की इसी संकीर्ण और क्रूर प्रवृत्ति को अनावृत किया गया है ।

सन् 1946 के कलकत्ते में प्राय: दंगे होते रहते थे । ऐसे ही दिन विशन सिंह एक घबराई हुई बंगाली स्त्री को देखता है । वह अकेली है । कुछ ही मिनटों में दंगे के कारण सारी सड़कें सुनसान हो जाती है । विशन सिंह उस स्त्री को धैर्य देता है और अपने घर ले जाता है । वह उसे गुरुद्वारे में अपनी बहिन के पास रखता है । दूसरे दिन वह उस स्त्री को उसके घर ले जाता है, वहाँ उसका पति उसे घर में रखने को तैयार नहीं-"तुम रात को क्या जाने कहाँ रही हो? सचेते तुम्हें यहाँ आते शरम नहीं आयी।"[1] हालांकि धरमतल्ले से होकर वह स्त्री सरदार विशन सिंह के साथ उस दुकान पर भी गयी थी, जहाँ उसके पति को मिलना था, किंतु वह वहाँ नहीं था । वह भी दंगे की वजह से एक मित्र के यहाँ रात गुजार कर आया था । स्त्री अपने पति से अपमानित शब्दों को सुनकर बेहोश होकर गिर जाती है । विशन सिंह उसे वापस ले जाता है तथा सशस्त्र सिखों को देकर दुबारा जाता है और उसके पति

---

1. - वही - पृ. 70

को मजबूर करता है कि वह उस स्त्री को घर में रखे । अगर बिशन सिंह बल - प्रयोग न करता तो उस स्त्री की क्या दशा होती "तब यही देखता हूँ कि वह औरत घर से दुतकारी जाकर मुसलमान हो, मुसलमान जने, ऐसे मुसलमान जो एक-एक सौ-सौ हिंदुओं को मारने की कसम खाए ।···हिंदू औरतों के साथ सचमुच वही करें जिसकी झूठी तोहमत उसकी माँ पर लगाई गई ।" ।

अज्ञेय कृत "बदला" एक ऐसे सिख शरणार्थी की कहानी है, जिसका परिवार शेखुपुरा में मुसलमानों द्वारा मारा गया है । अब वह प्रतिहिंसा से प्रेरित न होकर, रेलगाड़ी में दिल्ली से अलीगढ़ के बीच सफर करता है ताकि वह असहाय और आतंकित लोगों की मदद कर सके । इसप्रकार वह अपने ऊपर किए गए अत्याचार काबदला लोगों की मदद करके ले रहा है ।

सुरैया नामक एक मुस्लिम स्त्री दो बच्चों के साथ उसी डिब्बे में सवार होती है, जिसमें सिख अपने पुत्र के साथ अलीगढ़ तक यात्रा कर रहा है । अविश्वास और अनास्था के वातावरण में स्त्री सिख से डर रही है । किंतु जब एक हिंदू मुसाफिर और सिख की वह बातें सुनती है तो उसके प्रति सहानुभूति पैदा हो जाती है । उस स्त्री को इटावा जाना है । सिख उसे अलीगढ़ तक सुरक्षित पहुँचाने का आश्वासन देता है । स्त्री की आशंका पर कि वह अलीगढ़ में असुरक्षित रहेगा , सिख कहता है - "मारेगा भी कौन ?"··या मुसलमान या हिंदू । मुसलमान

1· - वही - पृ· 73

मारेगा, तो जहाँ घर के और लोग गए हैं वहीं मैं भी जा मिलूंगा ।" ।

हिंदू बाबू रस ले लेकर दिल्ली में हुई औरतों की बेइज्जती की बातें करता है । इस पर सिख शरणार्थी उसको चुप कराता हुआ कहता है-"औरत की बेइज़्ज़ती औरत की बेइज्जती है । शेखूपुरे में हमारे साथ जो हुआ सो हुआ-मगर मैं जानता हूँ कि उसका बदला कभी नहीं ले सकता-क्योंकि उसका बदला हो ही नहीं सकता । मैं बदला ले सकता हूँ - और वह यही, कि मेरे साथ जो हुआ है , वह और किसी के साथ न हो ।"[2]

इस कहानी के माध्यम से लेखक ने मानव-मूल्यों की पुनर्स्थापना का प्रयत्न किया है, जिस व्यक्ति की बहू-बेटियों की बेइज्जती और हत्या विधर्मी लोगों ने की, वही व्यक्ति उनके साथ सहानुभूति, सहयोग और उनकी बहू-बेटियों की हिफाजत का सराहनीय कार्य कर रहा है ।

"मैं जिंदा रहूंगा" यह विष्णु प्रभाकर की एक श्रेष्ठ कहानी है । विभाजन के दौरान हुई मार-काट में बहुत-से स्त्री, पुरुष और बच्चे अपनों से बिछुड़ गये थे । इस विकट और विकट स्थिति में विपदा के मारे बहुत-से लोगों को बहुतों ने अपनाया भी और उन्हें आश्रय एवं सुरक्षा भी प्रदान की । इस कहानी में प्राण नामक एक व्यक्ति जिसका पूरा परिवार

---

1. - वही - पृ. 78-79
2. - वही - पृ. 79

इस विभीषिका का शिकार हो चुका है एक स्त्री राज को आश्रय देता है, जिसके साथ एक शिशु भी है । वे दोनों उसे अपने बच्चे की तरह पाल-पोस रहे थे कि एक दिन उनके यहाँ पार्टी में उस बच्चे {दिलीप} का मामा उसे पहचान लेता है और बच्चे को उनसे ले जाते हैं। "साल भर पहले जब राज ने उसे पाया था, तब वह पूरे वर्ष का भी नहीं था । उस समय सब लोग प्राणों के भय से भाग रहे थे ।...भागते मनुष्यों पर राह के मनुष्य टूट पड़ते और लाशों के ढेर लगा देते ।...ऐसी ही एक ट्रेन में राज भी थी । हमला होने पर जब वह संज्ञाहीन सी अज्ञात दिशा की ओर भागी, तो एक बर्थ के नीचे से अपने सामान के भुलावे में वह जो कुछ उठाकर ले गई, वही बाद में दिलीप बन गया ।"[1] राज के दो बच्चे और पति का मार-काट में क्या हुआ , वे जीवित हैं या नहीं, इसका भी उसे पता नहीं था । इस बच्चे {दिलीप} से उसका लगाव हो गया था , जिसको खोकर वह उदास रहने लगी । प्राण बाबू, राज की इस उदासी और दिलीप की याद करने के ~~लिए/उसके~~ उसे उफान से उसे दूर ले जाना चाहते थे -"उसी उफान को शांत करने के लिए प्राण लखनऊ आया । वहाँ से कलकत्ता और फिर मद्रास होता हुआ दिल्ली लौट आया । दिन बीत गए, महीने भी आए और चले गए । समय की सहायता पाकर राज दिलीप को भूलने लगी ।"[2] इन्हीं दिनों प्राण यह महसूस करता है कि कोई व्यक्ति उन दोनों का पीछा करता है । एक दिन अकेले ही

----

1. नरेंद्र मोहन : भारत विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ-115

2. - वही - पृ. 117

उस व्यक्ति से बात करता है, जिससे पता चलता है कि वह राज का पति है । उसको इस बात की ग्लानि है कि मुसीबत के दिनों में वह उसकी रक्षा नहीं कर सका । प्राण उस व्यक्ति को राज के नाम एक पत्र देता है । वह व्यक्ति राज को अपने साथ ले जाता है ।

प्रस्तुत कहानी में प्राण के व्यक्तित्व को उभारा गया है । विभाजन की विभीषिका से उत्पन्न अत्यन्त निराशा से भरी घटनाएँ भी मनुष्य को अदम्य उत्साह और मानवीय भावनाओं को समाप्त नहीं कर सकीं ।

"मेरा वतन" विष्णु प्रभाकर की इस कहानी में मि॰ पुरी लाहौर के एक प्रसिद्ध वकील थे । लाहौर में ही उनकी सारी जिंदगी गुजरी थी । वहीं पर उन्होनें वकालत पढ़ी थी । विभाजन के बाद उनको लाहौर छोड़कर अमृतसर आना पड़ता है । उनके लड़के यहाँ अपना कारोबार जमा लेते हैं । मि0 पुरी भेष बदलकर पाँच-छः दिन के लिए लाहौर चले जाते हैं वे अपने वतन को भूल नहीं पा रहे हैं । वे वहाँ की सड़कों पर पागलों की तरह घूमते हैं । स्कूल , कालेज, कचहरी, अपना मकान आदि अनेक चीजों से वह अपना नाता तोड़ नहीं पा रहे थे । उन्हें अमृतसर का मुसलमान समझकर लाहौर में लोग उनके साथ बड़ी सहानुभूति से पेश आते हैं । जब परिवार वालों को इसके बारे में पता चला तो उन्होनें पूछा अब वहाँ क्या रखा, वे वहाँ क्यों जाते हैं । इस पर मि॰ पुरी कहते हैं-"क्यों जाता हूँ, क्योंकि वह मेरा वतन है

मैं वहाँ पैदा हुआ हूँ । वहाँ की मिट्टी में मेरी जिंदगी का राज छिपा हैं । वहाँ की हवा में मेरे जीवन की कहानी लिखी हुई है ।"1 एक बार ऐसे ही लाहौर में उनको एक मुसलमान पहचान लेता है कि वे हिंदू हैं तथा लाहौर के एक मशहूर वकील हैं । मि॰ पुरी को वह भेदिया और मुखबिर समझकर गोली मार देता है । एकत्र भीड़ में से हसन, जो मि॰ पुरी का साथी था उनको पहचान लेताहै तथा पूछताहै कि वह यहाँ क्यों आए थे । मि॰ पुरी धीरे से फुसफुसाए--- "मैं यहाँ ले क्यों आया ? मैं यहाँ से जा ही कहाँ सकताहूँ ? यह मेरा वतन है, हसन । मेरा वतन---।"2

जिस स्थान पर व्यक्ति जीताहै, वहाँ से उसका बटूट लगाव हो जाता है । उस स्थान के साथ जुड़ी बहुत-सी यादों को वह भुला नहीं पता । यह लगाव स्वाभाविक है । इसको किसी भी प्रकार की सीमाएँ या विभाजन मिटा नहीं सकते ।

"सिक्का बदल गया" कहानी की लेखिका कृष्णा सोबती ने विभाजन की वजह से बदलते मानवीय संबंधों को अभिव्यक्ति प्रदान की है । इस दौरान बहुसंख्यकों का अल्पसंख्यकों के प्रति सहसा आचार - व्यवहार बदल रहा था । जो मुसलमान किसी सम्पन्न हिंदू परिवार के आश्रय और कृपा - दृष्टि में पल रहे थे , विभाजन होते ही वे कैसे आँखें फेरने लगते हैं, किंतु अपने ऊपर किए गए उपकारों का बोध होते ही उनकी क्रूरता जाती

1॰ विष्णुप्रभाकर: मेरा वतन : पृ॰ 14

2॰ - वही - पृ॰ 19

रहती है । कृतज्ञता और कृतघ्नता का यही द्वंद्व इस कहानी में प्रखरता के साथ उभरता है ।

मीलों फैले खेत, दूर - दूर तक फैली हुई जमीनें, जमीनों में लगे कुवें - सब कुछ शाहनी का है । पति गुजर चुके हैं । उसका पढ़ा-लिखा बेटा भी नहीं रहा । सारा गाँव उसकी ओर श्रद्धा से देखता है । गाँव में मुस्लिम अधिक संख्या में हैं किंतु आज तक शाहनी को भय महसूस नहीं हुआ । उसने गाँव के कई मुसलमान लड़कों को बेटों की तरह प्यार किया तथा पाला - पोसा है । आज इस बुढ़ापे में वह गाँव की मानसिकता में परिवर्तन महसूस कर रही है । जिस शेरा को उसने अपने बेटे की तरह पाला वह भी उसकी हत्या करके हवेली पर अपना कब्जा जमाने की योजना बना रहा है-"यह होकर रहेगा-क्यों न हो ? हमारे ही भाई - बन्दों से सूद ले लेकर शाहजी सोने की बोरियाँ तोला करते थे । प्रतिहिंसा की आग शेरे की आँखों में उतर आयी । गड़ासे की याद हो आयी। शाहनी की ओर देखा -"नहीं-नहीं, शेरा इन दिनों में तीस-चालीस कत्ल कर चुका है-पर वह ऐसा नीच नहीं....।"[1]

हिंदू परिवारों को सीमा के दूसरी ओर ले जाने के लिए ट्रकें आ गई हैं । थानेदार दाऊद खाँ, बेगू पटवारी, शेरा और गाँव वाले, खड़े हैं । सभी पर कोई न कोई शाहनी का उपकार है । वे चाहते हैं कि शाहनी जल्दी जल्दी हवेली से बाहर निकले ट्रक पर बैठे । बेगू पटवारी सोच रहा है-"क्या गुजर रही है ,

----

1. सिक्के टोबा टेक सिंह: पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस -पृ.92-93

शाहनी पर । मगर क्या हो सकता है । सिक्का बदल गया है।"1 थानेदार दाऊद खाँ के यह कहने पर कि शाहनी अपने पास कुछ नकदी रख ले, वक्त का कुछ पता नहीं । इस पर शाहनी कहती है-"सोना-चाँदी ! बच्चा वह सब तुम लोगों के लिए है । मेरा सोना तो एक - एक जमीन में बिछा है ।...वक्त? दाऊद खाँ इससे अच्छा वक्त देखने के लिए क्या मैं जिंदा रहूँगी ।" 2 उसकी विदाई पर सारा गाँव रो रहा है । शाहनी को रोक पाने में सभी मजबूर हैं । कैम्प में पहुँचकर जमीन पर लेटे-लेटे शाहनी आहत मन से सोच रही है " राज पलट गया...सिक्का क्या बदलेगा ? वह तो मैं वहीं छोड़ आयी ।"3

"मेरी माँ कहाँ" कृष्णा सोबती की इस कहानी में एक क्रूर सैनिक यूनस खाँ का हृदय परिवर्तन दिखाया गया है, जिसने चार दिनों तक अनेक काफिरों का कत्ल किया, किंतु एक घायल मुर्च्छित बच्ची को पाकर उसका हृदय दया और स्नेह से तड़प उठता है । "चीखों की आवाज उसके लिए नई नहीं । उसने आग में जलते बच्चे देखे हैं, औरतें और मर्द देखे हैं । वह देखकर घबराता थोड़े ही है ?...आजादी बिना खून के नहीं मिलती, क्रांति बिना खून के नहीं आती...उसे तो लाहौर पहुँचना है ।...एक भी काफिर जिंदा न रहने पाये ।"4 वह ट्रक को तेज रफ्तार से चलाता जा रहा है । रास्ते में

---

1. - वही - पृ. 95
2. - वही - पृ. 96
3. - वही - पृ. 97
4. नरेन्द्र मोहन: भारत विभाजन:हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ-55

उसे एक घायल मूर्च्छित बच्ची मिलती है, जिसे वह उठा लेता है । यूनस खाँ के भीतर बच्ची को लेकर अंतर्द्वंद्व चलता है । "दिमाग सोच रहा है - वह क्या है? इसी एक के लिए क्यों हजारों मर चुके हैं । यह तो लेने का देना है । वतन की लड़ाई जो है । दिल की आवाज है - चुप रहो...इन मासूम बच्चों की इन कुरबानियों का आजादी के खून से क्या ताल्लुक?"[1] यूनस खाँ के दिलो-दिमाग पर अपनी बारह साल की खूबसूरत बहिन नूरन का ख्याल छा जाता है, जो मौत के दामन में समा चुकी है । वह मूर्च्छित और घायल बच्ची का मेयों हास्पिटल में इलाज करवाता है । उस बच्ची के माँ बहिन और भाई की हत्या मुसलमानों द्वारा की जा चुकी है । बच्ची के ठीक हो जाने पर वह उसे अपने घर ले जा रहा है । बच्ची को याद आता है कि इन्हीं के मजहब वालों ने उसके परिवार का नाश किया है । वह डरती है कि कहीं उसको भी यह न मार डाले । बच्ची उससे कैम्प में जाने की जिद करती है । वह उससे बहुत प्यार जताता है कि वह उसे अपने बच्चे की तरह पालेगा । इस पर बच्ची खान की छाती पर मुट्ठियों से प्रहार करती हुई कहती है - "तुम मुसलमान हो..तुम..." और चिल्लाती है "मेरी माँ कहाँ है । मेरे भाई कहाँ है । मेरी बहिन कहाँ..."[2]

बच्चा जो कि प्यार की भाषा से व्यक्ति के अच्छे बुरे की पहचान करता है, वह भी बँटवारे के माहौल में अपनी

---

1. - वही - पृ. 57
2. - वही - पृ. 60

मानव की हिंसक प्रवृत्ति को देखकर उसके धर्म के अनुसार आदमी से वह अपने को असुरक्षित महसूस करताहै । साथ ही साथ हिंसा के ऐसे भयानक वातावरण में भी लोगों के भीतर कोमल भावनाओं का स्रोत विद्यमान रहता है, जो किसी घटना की याद से बहने लगता है ।

"व्यथा का सरगम" इस कहानी के लेखक अमृत राय हैं। सुरेश्वर रेलवे के एक ऑफिस में क्लार्क है । उम्र तीस वर्ष । अपनी ही जिंदगी में खोया हुआ, अविवाहित । हमेशा किसी सुंदर तरुणी के सपने देखने वाला । आज उसने हजारा जिले की एक सीमान्त देशीय हिंदू पठान तरुणी को देखा था, जिसके सौन्दर्य पर यातना के गहरे काले बादल छाये हुए थे । वह शरणार्थी शिविर में रह रही थी । नाम था, बन्नो । उसके बारे में सुरेश्वर के पूछने पर उसके अधेड़ उम्र के पड़ोसी ने बताया "बन्नो की शादी हाल ही में हुई थी, उसी गाँव में, जबकि मार-काट शुरू हुई । उसके आदमी को कातिलों ने नेजा भोंककर मार डाला और इसे उठाकर ले गए । फिर बन्नो ने वहाँ क्या क्या देखा और कैसे एक रात जान पर खेलकर वह भाग निकली और छुपते-छुपते और दूसरे भागने वालों के संग जा मिली ।" । इस शिविर में आने पर वह काफी खामोश रहती है । बोलने या हँसने में भी अब उसे शायद तकलीफ होती है ।

एक दिन शिविर के पास ही कुएं से-"बन्नो पानी भरने गई तो थोड़ी दूर पर ही उस कोठरी में उसे किसी के

---

1. - वही - पृ. 24

चीखने या चीख के जबर्दस्ती रूंध दिये जाने की हल्की सी आवाज आई, हल्की मगर पैनी । कुछ मर्द आवाजों की फुसफुसाहट भी उसके कानों में पड़ी ।"। बन्नो उस कोठरी में कोई दस गज की दूरी पर थी कि किसी आदमी ने कुछ खोजने के लिए दियासलाई जलाई जो भक से बुझ भी गई । उसी क्षणिक रोशनी में बन्नो ने देख लिया कि कुछ व्यक्ति जबर्दस्ती एक लड़की की अस्मत लूट रहे हैं और लड़की मादरजात नंगी उनके कब्जे में है । बन्नो भी इस प्रकार के नाटक की नायिका रही थी । उसे समझते देर नहीं लगी कि उसके कौम के व्यक्ति दूसरे कौम की लड़की की अस्मत लूटकर कौम की बेइज्जती के साथ-साथ अपने धर्म की लड़की की लूटी गई अस्मत का बदला चुका रहे हैं । बन्नो के भीतरी पशु की आत्मा को गंभीर संतोष और तृप्ति का सुख मिल रहा था कि इस लड़की का खुदा उन जानवरों का भी खुदा है, जिन्होंने उसकी अस्मत लूटी थी । कोई डेढ़-दो मिनट के अंदर बन्नो की स्थिति द्वंद्वात्मक हो जाती है । वह उस लड़की को अपने रूप में देखती है । तत्क्षण वह उस लड़की को बचाने के लिए हाथ में खंजर लिए घुसती है । एक-दो जवानों पर हमला कर, उस लड़की और स्वयं को खंजर से मार लिया ।

इस कहानी में अमृतराय ने दिखाया है कि दोनों कौमों ने एक - दूसरे से बदला लेने के लिए स्त्री को अपनी वासना का शिकार बनाया किंतु एक स्त्री दूसरी स्त्री के प्रति कहीं-न-कहीं मानवीय हो सकती है । चाहे वह किसी भी कौम की क्यों न हो उनका दर्द तो एक ही है ।

।• - वही - पृ• 25

"टेबल लैंड" - उपेंद्र नाथ अश्क की कहानी में विभाजन का दर्द हिंदू-सिख और मुसलमान तीनों को ही सहना पड़ा। शरणार्थियों के रूप में उनको सीमा-पार इधर या उधर बसना पड़ा। दोनों ही तरफ उन पर अत्याचार हुए। उन्हें सब कुछ गवांकर नये सिरे से जिंदगी बसर करने के लिए विवश होना पड़ा ऐसे समय में कुछ व्यक्ति ऐसे भी थे, जो नीजि प्रयासों से शरणार्थियों की मदद कर रहे थे।

प्रस्तुत कहानी में दीनानाथ पंजाब के शरणार्थियों को कम्बल देने के लिए चंदा एकत्रित करता है। वह लाहौर का निवासी है और बंबई में फिल्मी कलाकार है। वह बीमार होने पर छह महीने तक पंचगनी के सेनेटोरियम में इलाज के लिए रहा था। वहां उसके अनेक हिंदू और मुसलमान मित्र हैं। वह वहीं से चंदा एकत्रित करने का काम शुरू करता है। उसने समाचार-पत्रों और खबरों में हिंदुओं के प्रति मुसलमानों के अत्याचार की कहानियां पढ़-सुनकर निर्णय लिया कि वह मुसलमानों से चंदा ग्रहण नहीं करेगा। सेनेटोरियम में कासिम नाम का उसका फिल्मी कलाकार मित्र उसे मुसलमानों से भी चंदा मांगने के लिए प्रेरित करता है, क्योंकि विपत्ति सभी पर आयी है और ऐसे समय में पंजाब से आये शरणार्थियों की मदद करने से उनके साम्प्रदायिक - क्रोध को कुछ राहत मिलेगी, साथ ही साथ अप्रत्यक्ष रूप से निर्दोष मुसलमानों की भी हत्या होने से बच जाएगी-"पंजाब से आने वाले हिंदु-सिख बड़े कष्ट होंगे। जब तक वे दुखी रहेंगे, उनका साम्प्रदायिक क्रोध शान्त न होगा। और जब तक उनका साम्प्रदायिक क्रोध शान्त न होगा, वे अपने ही ऐसे निर्दोष मुसलमानों की हत्या करने से बाज न आएंगे। उनकी

मदद करना तो मेरे लिए अपने भाइयों की मदद करने के बराबर है ।"[1] दीनानाथ पंजगनी में हर द्वार और दुकान पर जाकर चंदा मांगता है । बहुत-से सेठ लोग चंदा देते हैं, कुछ आनाकानी भी करते हैं । उसका विचार पाँच सौ रुपये एकत्र करके भेजने का है । जब उसके पास पाँच सौ रुपये होने में एक रुपया कम रहता है, तब वह एक क्वार्टर में जाता है । वहाँ उसकी भेंट मुस्लिम परिवार से होती हैं । वह वहाँ बुजुर्ग मुसलमान से हिंदुओं द्वारा किए गये मुसलमानों के प्रति अत्याचार की दर्दनाक कहानियाँ सुनता है-"स्टेशन के पास हिंदुओं ने दो बड़े-बड़े हवन-कुंड बना रखे थे जिनमें मुसलमानों को बलि के बकरों की भाँति जीवित झोंक दिया जाता था और प्रतिशोध के देवता को यह बलि देकर ब्राह्मण उल्लास से जयकारे बुलाते थे ।"[2] उन कहानियों को सुनकर दीनानाथ उस मुसलमान परिवार के कष्टों से द्रवीभूत हो जाता है । उसने अब तक के अथक परिश्रम से जो 499 रुपये का चंदा पंजाब के शरणार्थियों के लिए एकत्र किया था वह सारे रुपये उस परिवार को देकर आँखें पोंछता हुआ बाहर निकल आता है ।

"चारा काटने की मशीन" इस कहानी के लेखक अश्क है । अमृतसर शहर में मुसलमानों द्वारा बसाई गई इस्लामाबाद कालोनी में बँटवारे के दौरान मुसलमान अपना थोड़ा-बहुत कीमती सामान

---

1. सं॰ गिरिराज शरण अग्रवाल: साम्प्रदायिक सद्भाव की कहानियाँ पृ॰ 45
2. - वही - पृ॰ 52

बाँधकर, घरों पर ताले लगाकर, कैम्प या पाकिस्तान जा रहे थे । लालची किस्म के स्थानीय हिंदू-सिक्खों ने उन मकानों पर कब्जा जमाने के लिए, अपना सामान और ताले उनमें जड़ दिये थे । इसी घटना को आधार बनाकर उपेंद्रनाथ अश्क ने यह कहानी लिखी है ।

लहनासिंह अपने बच्चों-पत्नी के साथ अमृतसर में रहता है । वह चारा काटने की मशीनों को बेचने का धंधा करता है । कमाई अच्छी होने पर भी उसका मकान पुराने ढंग का है । जब दंगे शुरू हुए तो, मुसलमान अपने घरों पर ताले लगा-लगाकर पाकिस्तान जाने लगे । पत्नी द्वारा उकसाये जाने पर उसने भी एक मकान हथिया लिया । मकान पर ताला लगाकर पड़ौसी सरदार गुरूदयाल सिंह को उस मकान की देखभाल करने को कहता आया । वह बैलगाड़ी पर घर का सामान के साथ एक चारा काटने की मशीन भी नये मकान पर ले जाता है । पड़ौसी के साथ उसके बीवी-बच्चों को देखकर, समान दयोढ़ी में रख, वह बड़ा सा ताला लगा वह अपने बीवी-बच्चों को लेने जाता है । एक-डेढ़ घण्टे बाद जब वह इस्लामाबाद पहुँचा तो देखा ताला टूटा पड़ा है । सामान गायब है । पड़ौसी भी वहाँ नहीं है । केवल चारा काटने की मशीन वहाँ पड़ी है । पता चला कि अमृतसर के थानेदार ने इस मकान पर कब्जा कर लिया । वह कहता है-"हुजूर, इस मकान पर तो मेरा ताला पड़ा था । मेरा सारा सामान...।"[1] वे सिक्ख लहनासिंह को बाहर निकलने को कहते हैं । वह अपने सबूत में चारा काटने की मशीन दिखाता है

-------- ----

1. सं० नरेन्द्र मोहन: भारतविभाजन: हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियाँ पृ. 32

और कहता है यहाँ मुझे सब जानते हैं। किंतु वहाँ सभी अपरिचित चेहरे थे, लहना सिंह को कोई नहीं जानता था। इस पर सिख कहता है-"यों क्यों नहीं कहता कि चारा काटने की मशीन चाहिए"··सुट्ट ओ करतार सिंहा, मशीन नू बाहर। गरीब शरणार्थी हुआ। वसा इह मशीन साली की करनी ए।"[1]

"कितने पाकिस्तान" कमलेश्वर की प्रसिद्ध कहानी है। चुनार में मंगल का सलीमा से प्रणय-संबंध स्थापित हो जाता है। प्यार से उसे वह बन्नो कहता है। वे गंगा किनारे मिलते हैं। कस्बे के लोगों को उनके प्रेम का पता चलता है, तो मंगल को अपना कस्बा छोड़ना पड़ता है, क्योंकि एक हिंदू का एक मुसलमान लड़की से प्रेम करना बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। इससे दंगा होने का भी डर था। मंगल अपमानित होकर चुनार से निकाला गया था। वह बेचैन होकर उन गलियों को याद करता, जिनमें से होकर आने की बन्नो कोशिश किया करती थी। चुनार छोड़ने के दिन उसे महसूस हुआ जैसे एक पाकिस्तान उसके सीने में शमशीर की तरह उतर गया है।··मंगल सोचता कि बन्नो का अब्बा मास्टर साहब एक मुसलमान होकर एक हिंदू पर काव्य लिख रहे हैं। बन्नो का विवाह हो गया होगा। वह सब कुछ भूल गई होगी। जो नहीं भूल पाई होगी, वे यादें उसे तंग करती होंगी और वह रुका हुआ वक्त उसके लिए पाकिस्तान बन गया होगा।

मंगल के दादा के खत से पता चला कि वे चुनार छोड़कर

1· - वही - पृ· 32

आठ घर मुसलमान जुलाहों और दो घर हिंदू बढ़इयों को साथ लेकर भिवण्डी चले आये हैं। बाद में दादा मंगल से पूना में मिलने आये तो उन्होनें बताया कि मास्टर साहबका परिवार भी भिवण्डी में बस गया है। बन्नो की शादी हो गई और उसका पति रेशम काढ़िया करीगर है। वह भिवण्डी जाना चाहता है मगर "भिवण्डी में भी दंगा हो गया। मेरी तुम्हारी वजह से नही, उसी अहसास की कमी की वजह से।" [1]
दंगा समाप्त होने के कुछ दिन बाद मंगल भिवण्डी पहुंचा। जैसे - तैसे पूछता हुआ वह दादा के मकान पर पहुंचा। आंगन में उसे दो औरतें दिखाई दी। मास्टर साहब ने विशेष आवभगत नहीं की। उनसे पता चला कि दादा कुनार गए हैं। कमरे की चाबी मास्टर साहब से लेकर मकान के ऊपर के कमरे खोले और आंगन में खाट डालकर लेट गया।

चाँदनी झर रही थी। दो खाटें आंगन में पड़ी थी। बन्नो अपना ब्लाउज खोले, धोती कमर तक सरकाए नंगी पड़ी थी बन्नों की माँ ने उसकी छातियों को सुतना शुरू किया। दूध निकाल देने से बन्नो को राहत मिली।

सुबह पुलिस मंगल को बाहर वाला समझकर थाने ले गई। मास्टर साहब (मुसलमान) ने मंगल (हिंदू) की निर्दोषता का बयान थाने में दिया। मास्टर साहब से ही पता चला कि बन्नो का बच्चा भी आगजनी में मारा गया है। बन्नो का पति अपना खून बंबई में बेचकर शराब पीता है और वे स्वयं भरथरी नामा लिख रहे हैं।

----

1. - वही - पृ. 42

कुछ महीनों के बाद मंगल को दादा के पुत्र से सूचनाएं मिलीं कि वे वापस भिवंडी आ गए हैं तथा बन्नो को उसका पति बंबई ले गया है ।

मंगल अपने दोस्त केदार के साथ बंबई गया । कुलाबा के एक शराब-घर में थोड़ी-सी पी भी । फिर वे एक बिल्डिंग की पाँचवी मंजिल तक ऊपर सीढ़ियों से गए । केदार ने मंगल को वहीं सोफे पर बैठकर इंतजार करने को कहा । इंतजार करते करते मंगल ने बीयर पी । जब केदार लौटकर मंगल की बीयर के पैसे देने लगा तो बगल का दरवाजा खुला और एक औरत ने केदार को उसका कंधा और बाबियों का गुच्छा दिया । तभी उस औरत ने पूछा -"और है कोई?"

मंगल ने पलटकर देखा-"दरवाजे की चौखट पर हाथ रखे पेटीकोट और ब्लाउज पहने तुम खड़ी थी बन्नो । और पूछ रही थी-और है कोई ?"।

इस कहानी में कमलेश्वर ने पाकिस्तान के निर्माण के साथ ही लोगों के जीवन में अनायास ही आ जाने वाले दुखों और संबंधों के बीच आ जाने वाले अलगाव को पाकिस्तान की संज्ञा दी है ।

"अंतिम इच्छा" बदी उज्जमां की इस कहानी में कमाल भाई अपने कट्टर मुस्लिम लीगी विचारों के कारण महसूस करता है कि मुसलमानों का भारत में कोई भविष्य नहीं है । पाकिस्तान

---

1. - वही - पृ. 53

ही मुसलमानों के सपनों को साकार करने का एक मात्र स्थान है और वह विभाजन से पूर्व ही कराची में जा बसता है । वह अपने घरवालों को भी साथ ले जाना चाहता था, किंतु उसकी अम्मा ने कहा था-"यह तो हमसे न होगा । अपना घरबार छोड़कर परदेश जा बसे ।" ।

वह बीच-बीच में भारत आता और अपने शहर "गया" को कराची से भी शानदार शहर बताता । उसका यहाँ से जाने को मन नहीं करता, मगर विवशता वश जाना पड़ता । गया स्टेशन पर असिस्टेंट स्टेशन मास्टर लालवानी है, जो कराची को बहुत प्यार करता है । वहाँ के मित्रों को कमाल भाई के जरिए सलाम भेजता है -"मेरा सलाम जरूर बोलना रफीक टीस्टाल वाले को और अब्दुस्सत्तार को और मिस्टर लतीफ को । कहना लालवानी बहुत याद करता है तुम सब को।"[2] लालवानी की रग-रग में कराची बसा हुआ है । दूसरी ओर कमाल भाई हैं जो गया की हवाओं के लिए तरसते हैं ।

कमाल भाई को कराची में अपने वतन की बहुत याद सताती है । इसी छटपटाहट में उनकी मृत्यु हो जाती है । उन्होंने मरने से पहले अपनी पत्नी को अपनी अंतिम इच्छा बताई-"मैं कराची के रेगिस्तान में मरना नहीं चाहता । मुझे वहीं दफ्न करना फल्गु नदी के उस पार कब्रिस्तान में जहाँ अब्बा की कब्र है और बड़े अब्बा की ।"[3]

---

1. - वही - पृ. 63
2. - वही - पृ. 68
3. - वही - पृ. 73

कमाल भाई ने अपनी जिंदगी का अधिकतर हिस्सा गया में ही व्यतीत किया था । यहीं वह पैदा हुआ, बड़ा-लिखा । इस जगह के प्रति उसका लगाव होना स्वाभाविक है । इस्लामी संस्कृति के "हजरत यूसुफ ने इंतकाल से पहले अपने खानदान वालों से यह वायदा कराया कि वे उन्हें मिस्त्र की जमीन में दफन नहीं करेंगे, बल्कि जब खुदा का यह वायदा पूरा हो कि बनी इस्त्राइल दुबारा फिलिस्तिन हो यानी अपने पुरखों की जमीन में वापस हों तो उनकी हड्डियाँ वे अपने साथ लेते जाएंगे और वहीं मिट्टी के सुपुर्द कर देंगे ।"[1]

व्यक्ति चाहे किसी भी कौम से सम्बन्ध रखता हो, अपने वतन से दूर रहकर उसे चैन और सुख नसीब नहीं हो सकता। विभाजन के दौरान हुए परिवर्तन में ऐसी स्थिति में जीने के लिए लाखों लोग इस शाप से ग्रस्त हैं ।

"परदेशी" बदीउज्जमां की इस कहानी में एक ऐसे व्यक्ति की पीड़ा को उजागर किया गया है, जो आजीविका के लिए परदेस जाकर अपने को अजनबियों के बीच महसूस करता है । अपने वतन की याद में और धार्मिक उत्सव में शामिल न हो सकने की तड़प को वह महसूस करता है । जिस वतन में वह बड़ा हुआ, खेला-कूदा उसी में ठहरने के लिए उसे वीसा की अवधि पर निर्भर होना पड़ता है । आजीविका के लिए अपनाए देश में लौटने को वह विवश है ।

---

1. - वही - पृ. 73

छाको (अब्दुश्शकूर) अपने द्वारा पत्र लिखता है । उसके परिवार में उसी की विधवा बहिन जनवा (जैनब), उसकी पुत्री और बाबा हैं । पत्रों को लिखने-पढ़ने का काम खाजे बाबू का है ।

एक दिन पत्र द्वारा पता चलता है कि छाको पाकिस्तान चला गया है-..."इलाही मास्टर..सब कारीगरों से बोले कि हमारे साथ चलना होगा । हम बड़े मुश्किल में फंसे । इतना वक्त भी नहीं दिया कि आप लोगों से मिलकर कुछ सलाह कर सकें । चार-पाँच दिन के अंदर हम सबको लेकर ढाका पहुंच गये ।"[1]

खाजे बाबू को आश्चर्य होता है कि पाकिस्तान बनने पर पढ़े-लिखे, नौकरी पेशा लोग ही वहाँ गये थे, मगर छोटे-मोटे धंधे के लिए दूसरे मुल्क में जाना और वह भी इस समय जबकि पाकिस्तान को बने एक अरसा हो गया ।

खाजे बाबू अपने बचपन के दिनों को याद करता है जबकि छाको उसके साथ खेला करता था । खाजे के अब्बा ने एक बार उसे छाको के साथ खेलने पर डाँटा था कि कमीने लड़कों के साथ न खेला करे । छाको ने ये शब्द सुन लिए थे और वह नाराज हो गया था । फिर अब्बा ने किस तरह जलेबियाँ देकर छाको को कहा था कि बड़ों की बात का बुरा नहीं माना करते । छाको किस तरह मुहर्रम के अखाड़े में शरीक होता था, किंतु खाजे बाबू को अखाड़े में शामिल होने की इजाजत

----

1. सं0 नरेंद्र मोहन : सिक्का बदल गया : पृ. 132

नहीं मिलती थी । वह देखा करता था-"छाकों पैक बनकर किस तरह फुदका फिरता था । सफेद चूड़ीदार पायजामे पर हरा कुरता । कमर बंद बांधे हुए , जिसमें तीन - चार घंटियां और एक मूछल लटकती रहती । हर दाहा एक किये रहता था वह । रात भर उसकी घंटियों की आवाज गली में गूंजती रहती । " ।

छाकों का एक पत्र फिर आया, जिसमें उसने लिखा कि इलाही मास्टर की दुकान चल रही है, उन्हें एक बड़ा ठेका मिल गया है । मेरा यहाँ मन नहीं लगता । मुझे पढ़कर बड़ा दुख हुआ कि मुहर्रम में तीन बरे बाजा था । रोशनी का फाटक भी नहीं था । मैं होता तो ऐसा नहीं होने देता ।

ताजे बाबू महसूस कर रहा है कि छाको सैंकड़ों मील दूर बैठा हुआ मुहर्रम के अखाड़े से कितनी निकटता महसूस कर रहा है ।

छाको एक महीने का वीसा लेकर अपने घर आता है । वापस जाने को उसका मन नहीं करता मगर वह अब पाकिस्तान का नागरिक है । वहाँ जाने के लिए वह विवश है । अपने परिवार से विदा लेते समय वह रोता है ।

"मुक्ति" देवेन्द्र इस्सर की इस कहानी में, जो लोग विभाजन से पूर्व समृद्ध और सम्पन्न थे, उनको विभाजन के बाद दर-दर की ठोकरें खाने को मजबूर होना पड़ा । उनको सहायता

----

1. - वही - पृ. 140

के लिए राजनीतिज्ञों के निर्णयों पर आश्रित होना पड़ा, परिणाम स्वरूप वे दुखों और कठिनाइयों को सहते हुए मृत्यु को प्राप्त हुए ।

विभाजन के बाद, जो लोग पाकिस्तान से भारत आये, वे विभिन्न हिस्सों में बस गये । लीलावंती का परिवार भी लुट-पिट कर आया । वे विभाजन से पूर्व काफी समृद्ध थे । उसके पति डाक्टर थे । रावलपिंडी में उनका अपना घर था । उसके दो बच्चे वहीं पैदा हुए थे । एक जवान लड़की थी शीला । आजादी की रात उन पर कहर बरपा-"फिर आजादी की रात आयी और उसके साथ उसके घर में गुण्डे भी आए ।...गुण्डे शीला को उठाकर ले गए ।"[1] लीलावंती अपने छोटे बच्चे और पति के साथ केवल पचास रुपये का माल लेकर दिल्ली आ गए । पति मजबूरी वश बीमा एजेंट बन गया । आमदनी इतनी कम थी कि कई बार उनको खाना भी नसीब नहीं होता था।

लीलावंती के पति दो दिन से घर नहीं आये । उनको खोजने के लिए लीलावंती भूखी-प्यासी घर से निकल पड़ी । काफी भटकने पर उसे पता चला कि उसके पति की असहायता को देखकर उसे जेब कतरा समझा गया और जेल में ठूस दिया । वह शरणार्थियों की मांगों के जुलूस में भी जाती है उसको वहां से भी निराशा लौटना पड़ता है । दिन भर की धूप, भूख और थकान से-"लीलावंती अपने पति की राह देखती हुई उसकी प्यारी याद का दर्द अपने दिल में लिए हुए , अपनी जवान मासूम लड़की

---

1. - वही - पृ. 115

के अरमानों, हसरतों, तमन्नाओं और कुंवारी इस्मत के खून का दाग सीने में छिपाए हुए, अपने नन्हे बच्चे के आंसुओं में अपनी जिंदगी के गम और दु:ख की झलक देखते हुए इस नयी धरती की सीमाओं को पार करके दूर कहीं धुंधलकों में खो चुकी थी ।"।

इस प्रकार लीलावंती लगातार अनेक दुखों को झेलती हुई, विभाजन से प्राप्त अनेक पीड़ाओं को सहती हुई दम तोड़ देती है ।

"अमृतसर आ गया है" भीष्म साहनी की यह एक प्रसिद्ध कहानी है । हिंदू-मुस्लिम, बंटवारे के दिनों एक-दूसरे से बहुत घबराए हुए थे । जहाँ हिंदू-सिख बहुसंख्या में थे वहाँ मुस्लिम और जहाँ मुस्लिम बहुसंख्या में थे वहाँ हिंदू-सिख भयभीत थे ।

बदले हुए माहौल में आदमी की मानसिकता किस प्रकार परिवर्तित होती है, यह इस कहानी में दिखाया गया है । लेखक रेलगाड़ी से दिल्ली आ रहा है । जेहलम का स्टेशन पीछे छूट गया है । डिब्बे में बैठे पठान एक मरियल-से दिखाई देने वाले हिंदू बाबू को मजाक का केंद्र बनाए हुए हैं । वह बाबू चुपचाप उनके अत्याचार नुमा मजाक सहन कर रहा है ।

गाड़ी वजीराबाद स्टेशन पर रुकती है । वहाँ दंगे का आभास मुसाफिरों को होता है । डिब्बे में एक व्यक्ति अपनी

।• - वही - ।2।

पत्नी, पुत्री और सामान के साथ चढ़ने की कोशिश करता है। पठान उनका अपमान करते हुए उनको डिब्बे से उतरने के लिए मजबूर करते हैं, हिंदू बाबू चुपचाप यह अत्याचार देखता है । लोग खिड़कियों से शहर में हुए दंगे और आग के दृश्यों को देखते हैं । उसकी प्रतिक्रिया डिब्बे में होती है "जब गाड़ी शहर छोड़कर आगे बढ़ गई तो डिब्बे में सन्नाटा छा गया ।..दुबले बाबू का चेहरा पीला पड़ गया ।..अपनी-अपनी जगह बैठे सभी मुसाफिरों ने अपने आसपास बैठे लोगों का जायजा ले लिया । सरदार जी उठकर मेरी सीट पर आ बैठे । नीचे वाली सीट पर पठान उठा और अपने दो साथी पठानों के साथ ऊपर वाली बर्थ पर चढ़ गया । ..डिब्बे में तनाव आ गया ।"[1]

रेलगाड़ी अपनी विभिन्न गतियों से मंजिल की ओर बढ़ रही है । दुबला बाबू सहसा चिल्ला उठता है-"हरबंस पुरा निकल गया है। उसकी उत्तेजना मिश्रित आवाज सुनकर सभी मुसाफिर चौंक जाते हैं ।

गाड़ी ने लाइन बदली तो बाबू ने झांककर बाहर देखा-" शहर आ गया है ।" वह फिर ऊँची आवाज में चिल्लाया, "अमृतसर आ गयाहै" । उसने फिर से कहा और उछल कर खड़ा हो गया, और ऊपर वाली बर्थ पर लेटे पठान को सम्बोधित करके चिल्लाया-" ओ बे पठान के बच्चे ? नीचे उतर तेरी माँ की....नीचे उतर, तेरी उस पठान बनाने वाले की मैं...अपने घर में शेर बनता था ।"[2] अमृतसर स्टेशन पर गाड़ी रुकते ही

---

1. सं0 नरेंद्र मोहन: भारत-विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ पृ. 81
2. - वही - पृ. 84

पठान अपने साथियों के साथ दूसरे डिब्बे में चले जाते हैं । बाबू डिब्बे से न जाने कब गायब हो गया जब लौटा तो उसके हाथ में लोहे की छड़ थी । पठानों को डिब्बे में न पाकर वह अपने चारों ओर देखने लगा "निकल गये हरामी, मादर••सब के सब निकल गए ।" फिर वह सिटपिटाकर उठ खड़ा हुआ और चिल्लाकर बोला-"तुमने उन्हें जाने क्यों दिया ? तुम सब नामर्द हो, बुजदिल ।"[1]

कहानी यहीं समाप्त की जा सकती थी, किंतु लेखक ने एक अन्य घटना देकर मरियल बाबू की मानसिकता को परिवर्तित होते दिखाने का संकेत दिया है । एक मुसलमान अपनी पत्नी के साथ डिब्बे में चढ़ने की कोशिश करताहै । बाबू उसके सिर पर लोहे की छड़ से वार करता है । वह व्यक्ति कटे पेड़ की भांति नीचे गिर पड़ता है । बाबू इस कृत्य को करने पर बुत बना दरवाजे पर खड़ा रहता है । फिर पीछे की ओर देखने लगा, गाड़ी आगे निकलती जा रही थी । दूर , पटरी के किनारे अंधियारा पुंज-सा नजर आ रहा था । उसने छड़ को डिब्बे से बाहर फेंक दिया । उसने अपने कपड़ों पर देखा कि कहीं खून का कोई निशान तो नहीं है, हाथों को सूंघा उनमें खून की बू तो नहीं आ रही । फिर वह दबे पांव आया और लेखक के बगल की सीट पर बैठ गया ।

"पानी और पुल" इस कहानी के लेखक महीप सिंह हैं । विभाजन की तत्कालिक परिस्थितियों के वशीभूत होकर मानव क्रूर और वहशी हो गया था और उस मानसिकता में उसने जो

1• - वही - पृ• 85

अत्याचार किये, उनको याद करके कोई कल्पना भी नहीं कर सकता कि उन्हीं दिलों में इतनी पवित्र और कोमल भावनाएं पुल के नीचे बहती नदी के पानी की भाँति हिलोरे मार रही हैं ।

विभाजन के चौदह वर्ष बाद लेखक अपनी माँ और तीन सौ तीर्थ यात्रियों के साथ पाकिस्तान में स्थित सिख धर्म के पवित्र स्थलों के दर्शन करने जा रहा है । लाहौर तथा अन्य स्थानों के सिख धर्म स्थलों के दर्शन के बाद ये लोग पंजा साहब की ओर रेलगाड़ी से जा रहे हैं । गाड़ी रास्ते में पड़ने वाले सराई गाँव के स्टेशन से रात दो ढाई बजे गुजरने वाली है । माँ उसको बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही है, क्योंकि विभाजन पूर्व उसने अपनी जिंदगी का बहुत बड़ा हिस्सा उस गाँव में बिताया था । लेखक को सराई गाँव के प्रति कोई आत्मीयता नहीं है । वह माँ को सोने के लिए कहता है, किंतु वह जागती रहती है । गाड़ी सराई स्टेशन पर पहुंचती है । एक छोटी सी भीड़ डिब्बे के सामने आकर पूछती है कि कोई सराई गाँव का है ? माँ कहती है हम हैं । वे लोग बड़ी उत्सुकता के साथ उनको बादाम, अखरोट , किसमिस आदि सूखे मेवों की पोटलियाँ भेंट स्वरूप देते हैं और उनके परिवार वालों के बारे में पूछते हैं । लेखक को यह सब देखकर आश्चर्य होता है, और माँ इस आत्मीयता से मिली खुशीसे रो रही है । वे सब लोग बार-बार आग्रह कर रहे हैं कि कुछ दिन के लिए अपने परिवार के साथ सराई गाँव में आकर रहो ।

लेखक ने देखा कि लोग उनसे बातें करने का लोभ नहीं छोड़ पा रहे हैं । जब गार्ड ने गाड़ी को चलने के लिए हरी लालटेन उठाई तो चार आदमियों ने उसे पकड़ लिया-"अरे बाबू

दो-चार मिनट और खड़ी रहने दे न गाड़ी को । देखता नहीं यह बीबी इसी गाँव की है•••।" और एक ने उसका लालटेन वाला हाथ पकड़कर नीचे कर दिया ।"[1]

"मामूली लोग" श्रवण कुमार की इस कहानी में विभाजन के दौरान हुई विभिन्न घटनाओं को यादों के रूप में संयोजित कर लिपिबद्ध किया गया है ।

लेखक ने अनेक तड़पती हुई तथा मुर्दा लाशों को देखा था तथा एक बुढ़िया को भी देखा जिसको किसी ने नहीं मारा । वह बार-बार बुदबुदाए जा रही थी-"वे पुतरों, मैनुं अन्नी नू कि वास्ते ज्युंदा छडिया ए । वे पुतरों, मेरी वी कोई गरदन लाह दयो ।"[2] उसके बचे रहने का कारण यही था कि वह बुढ़िया थी उससे किसी को कुछ लेना देना नहीं था ।

उस समय का वातावरण ऐसा था कि कोई भी दुर्बल हिंदू व्यक्ति हिंदुओं के मुहल्ले में फँसे हट्टे-कट्टे मुसलमान को अपना हुक्म मानने के लिए मजबूर कर सकताथा । एक शराबी, मुसलमान सिपाही को धराशायी कर सकता था ।

लोगों का अपने मकानों को छोड़-छोड़कर भागना, रातों को"अल्लाह-हू-अकबर","सतसिरी अकाल" और"हर-हर महादेव" के नारे लगना, गोलियों की तड़-तड़ की आवाजें उस समय आम बात थी । उस समय रेलगाड़ियों में मुसाफिरों की हत्या करके लाशें दोनों देशों को भेंट स्वरूप भी दी जा रही थी -"पहले जो

1• - वही - पृ• 94

2• - वही - पृ• 124

गाड़ी रवाना हुई थी, उसे रोककर उसके एक-एक आदमी को चुन-चुनकर काटा गया और रोककर उसके लाशों से भरी और खून से लथपथ गाड़ी को "हिंदुस्तान" के लोगों को भेंट स्वरूप भेजा गया । बाद में सुना कि ऐसी ही एक गाड़ी पाकिस्तान को भी हिंदुस्तान की ओर से भेंट की गई, और इस भेंट का आदान-प्रदान काफी दिनों तक चलता रहा ।" [1]

एक दिन एक बुढ़िया उनके मुहल्ले में आयी, "जिसका पति पाकिस्तानियों ने उसकी आँखों के सामने मार डाला था। बेटा कहीं बाहर गया था । वह लौटा ही नहीं । बेटी धोखा दे गयी और वहीं पाकिस्तान में एक "मोये लफंगे" के साथ रह गयी । पीछे मिलिट्री उसे ढूंढ कर लाई थी, पर एक रात वह फिर भाग गई । हुन दस्सों, मैं की करां ? अकेली जान, जहां वे सब मर-खप गए , वहां उसे क्यों न मौत आई?[2] उसे मुहल्ले में किसी-न-किसी द्वार से रोटी मिल जाती । वह बीमार पड़ी । फिर उसके शरीर में कीड़े पड़ गए । बच्चों ने उसे पत्थर मारे । वह कुत्ते की मौत से भी बदतर मौत मर गयी ।

"कानून" इसके लेखक यशपाल हैं । इसमें तत्कालीन दंगों की परिस्थितियों में दंगों पर काबू पाने के लिए सरकार ने इतनी शक्ति से कानून लागू किए जिससे मानवता की बिलकुल उपेक्षा हो गयी ।

नगर में दंगे हो रहे थे । सरकार के निर्णय से सम्पूर्ण नगर में सायं छह बजे कर्फ्यू लगा दिया जाता था । दुकानदारों

1· - वही - पृ· 133

2· - वही - पृ· 133

के लिए वही समय ग्राहकों के आने का होता था । ऐसे ही समय एक दुकानदार रामसरन ने बेमन से अपनी दुकान में ताला लगाया और घर चला गया । खाना खाकर वह अपने घर की तिमंजले पर बनी बरसाती में लेटकर हुक्का पीते-पीते सो गया। हुक्के से एक चिंगारी निकलकर बरसाती में पड़े फूस और खाली बक्सों में आग लग गई । रामसरन "आग-आग करता चिल्लाता है । पड़ौसी मशवरा देते हैं कि फायर ब्रिगेड को फोन कर आए । बाहर कर्फ्यू है । वह हिम्मत करके बाहर निकलता है, जहाँ उसे गोरा सिपाही गिरफ्तार कर गश्ती लारी में धकेल देता है । उसकी एक नहीं सुनी जाती । थाने में वह चिल्लाता है मेरे घर में आग लगी है, किंतु मुंशी क्रुद्ध होता है-" साले यहाँ हम सरकारी काम करने बैठे हैं कि तुम मा···घर में आग लगाकर आवारागर्दी करो और हम तुम्हारे बाप के नौकर हैं ।"[1] रामसरन फिर चिल्लाता है । उसकी पिटाई की जाती है । उसे मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया जाता है, जहाँ वह जुर्माना देकर अपना पिण्ड छुड़ाता है ।

"खुदा खुदा की लड़ाई" यशपाल की इस कहानी में अगस्त 1947 के लाहौर के सेदमिट्ठा बाजार की उस स्थिति को चित्रित किया गया है, जहाँ हिंदू- मुस्लिम साथ रहते हुए भी साम्प्रदायिक दंगे की आशंका में एक-दूसरे के प्रति अविश्वास, धृणा, द्वेष और आक्रमण की वजह से एक-दूसरे से डरकर अपने घरों को छोड़कर चुपचाप सुरक्षित स्थानों पर चले जाने में ही अपना हित समझते हैं ।

---

1. यशपाल: तर्कों के तूफान, पृ॰ 117-118

गंगू की गली के मकानों खाली हो गए हैं । गली के दायें-बायें सेद मिट्ठा बाजार भी सुना है । गंगू की गली के सब हिंदू परिवार 13 अगस्त की सुबह तक भाग गए थे । मूला ताई वहाँ रह गई थी । उस गली में हिंदुओं के डर से कोई मुसलमान नहीं आरहा था । केवल नुक्कड़ की दुकान वाला लालारी {रंगरेज} फज्जे और उसका बेटा नसरू ही लाचारी में वहाँ रह गएथे । उसे गली से अपने चालीस बरस के सम्पर्क का भरोसा था-"मुद्दतों से गली के सब बच्चे - बच्चियाँ और युवा-युवतियाँ उसे अपना मामा कहते आये थे । बहू-बेटियाँ सिर पर बाँधने लिए बिना भी उसे रंगने के लिए चुन्नियाँ, साड़ियाँ और पगड़ियाँ थमा जाती थीं ।" 1

गली के सारे हिंदू भाग गए किंतु ताई को अपने धन और मकान का लोभ जकड़े रहा । नसरू उसके सम्बंध में कहता है-"वो डायन कहाँ जाएगी । अपना सोना-चाँदी गाड़े उस पर साँप बनी बैठी है ।" 2

13 अगस्त को साम्प्रदायिक उत्तेजना से बावले आवारा मुसलमानों की भीड़ ने सेदमिट्ठा बाजार पर हमला बोला और हिंदुओं की दुकानों के ताले तोड़कर उन्हें लूट लिया । लाहौर के बाजारों में लूट और दंगे बढ़ गया । उसको काबू में करने के लिए कर्फ्यू की घोषणा कर दी गई ।

नसरू "लुहारी मण्डी" से एक छुरा ले आया था । शाम सात बजे कर्फ्यू होने पर वे दोनों पिता-पुत्र अपनी कोठरी में

---

1. यशपाल : सच बोलने की भूल - पृ. 97
2. - वही - पृ. 101

घुस गए , मगर गर्मी अधिक होने के कारण नसरू कोठरी की दहलीज पर आकर उकडू बैठ गया ।

कठोर कर्फ्यू में वह किसी की पदचाप सुनकर चौंका। ध्यान से देखने के बाद अपने बाप को बताया कि मुलाताई गठरी में रकम दबाए छिपकर भाग रही है । फज्जे ने करुणा से कहा-"होगी, उसे अल्लाह रखे, तुझे क्या ?" ।

नसरू पिता की बात पूरी सुने बिना बुढ़िया के पीछे भागा और बिजली के खम्बे के समीप मुलाताई को छुरा भोंक कर मार दिया और गठरी छीनकर भाग आया ।

कोठरी में आकर उसने उल्लाससे कहा-"•••काफिर बुढ़िया सब कुछ लिए भागी जा रही थी ।"[2] गठरी खोलने पर केवल पत्थर की मूर्ति हाथ लगती है । इस पर फज्जे ने व्यंग्य मिश्रित क्रोध से कहा -"ओऐ, तेरी माँ नूं सुर••बेड़ा गरक होये तेरा, मासूम बूढ़ी का खून कर दिया । काफिर अपने पत्थर के खुदा को लिए भागी जा रही थी । अपने पत्थर के खुदा से तेरे खुदा का सिर फोड़ देती । तू बड़ा गाजी है, तूने अपने खुदा को बचा लिया ।" [3]

"दिल्ली की बात" के लेखक बेचन शर्मा उग्र हैं । दिल्ली में हुए साम्प्रदायिक दंगों को रोकने के लिए महात्मा गांधी और राष्ट्रवादी मुसलमानों ने भी अनेक प्रयत्न किये थे । ऐसे ही एक प्रयत्न का जिक्र इस कहानी में है । यह कहानी एक ऐसे मुसलमान की है

1;2 और 3 - वही - पृ॰ 105-106

जिसकी माँ पहले हिंदू थी किंतु अपने ही धर्म और परिवार से मिले अपमान और तिरस्कार के कारण वह मुसलमान हो गई थी और अपने पुत्र को ऐसी शिक्षा दी कि वह हिंदुओं से नफरत करे तथा उनका कत्ल करे ।

महात्मा गांधी के दिल्ली पहुंचने पर मौलाना मुहम्मद अली बताते हैं-"पहले आपको यहाँ के एक मुसलमान युवक मौला से बाते करनी होंगी । पहले उससे शस्त्र रखवाना होगा । वह हम लोगों की बातें सुनता ही नहीं ।"[1]

गांधी जी ने उसकी माँ के दर्शन की इच्छा प्रकट की । मौला अपनी माँ को लिए गांधी जी के पास पहुंचा । गांधी जी के सामने उसकी माँ ने बताया कि वह हिंदू नारी थी । उसके पिता तथा ससुर दोनों धनी थी । दुख किस चीज को कहते हैं, यह उसने नहीं जाना था । जब वह केवल सोलह वर्ष की नवयौवना थी उसके पति का देहांत हो गया । इसके साथ ही उस पर दुखों का पहाड़ टूट पड़ा । उसे कुलनाशिनी समझा गया । प्रतिदिन उस पर अत्याचार किए जाते थे । उसकी इज्जत घर की मजदूरनी से भी कम हो गयी थी-"पति के मरते ही मेरी इत्रों की शीशियाँ दासियों में बाँट दी गई, मेरा आईना तोड़ डाला गया, श्रृंगार दान भस्म कर दिया गया, क्योंकि मैं विधवा हो गयी थी ।[2]

वह आगे बताती है- मेरे बड़े देवर की मुझ पर बुरी नजर थी । वह मुझे सब्जबाग दिखाता था । मैं प्रेम और सुख की भूखी थी, उसके हत्थे चढ़ गई । कुछ समय बाद मैं गर्भवती हुई । देवरगर्भ

----

1. पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र" / ऐसी होली खेलो लाल-पृ. 26

2. - वही - पृ. 28

की बात सुनकर चौंका और मुझे अकेले काशी जाकर गर्भपात कराने की ~~बात सुनकर/चौंका/और/मुझे~~ सलाह दी । वह नीच उस गर्भ को अपना मानने से इंकार करने लगा । तब यही मौला मेरे गर्भ में था । मैं उसी दिन रात के समय अपने सारे गहने लेकर घर से निकल पड़ी घण्टा भर चलने के बाद कोई आश्रय न देख सामने दिखी मस्जिद में पहुँची । मस्जिद के मुल्ला को अपनी सारी कहानी सुनाई । वह ईमानदार और पवित्र आदमी था । उसने मुझे आश्रय दिया और लोगों से मुझे अपनी बेवा भतीजी बताया । उसी घर में मौला पैदा हुआ । बड़ी मैंने इसे पाला-पोसा और हिंदू-द्रोह की शिक्षा दी । इन दंगों का मैं इंतजार कर रही थी । मौला ने उस दुष्ट देवर का सिर काटकर मेरे चरणों में ला दिया । इस पतित हिंदू- समाज का जितना नाश होगा , मुझे उतना ही संतोष मिलेगा । यही शिक्षा मैंने अपने पुत्र मौला को दी है ।

गांधी जी ने समझा-बुझाकर उस स्त्री को काशी भेज दिया तथा मौला को साबरमती आश्रम ले गए ।

यह कहानी हिंदू-धर्म में व्याप्त कुरीतियों पर करारा व्यंग्य करती है ।

"देवर द्रोही" पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र" की इस कहानी में एक नास्तिक व्यक्ति जो किसी धर्म, व्यक्ति, जाति में भेदभाव नहीं करता , केवल मानवता का पुजारी है । दंगे के दौरान मारे गए अपने पुत्र के हत्यारों {मुसलमान} से बदला लेने के लिए उसको भी हथियार उठाने के लिए मजबूर होना पड़ता है ।

गोपाल जी के घर एक भिखारिन आती है । उसके बारे में पूछने पर वह बताती है कि वह लखनऊ की रहने वाली हैं और नवाब खानदान से ताल्लुक रखती है । नवाबी जाती रही । वह भीख मांगती है । उसके परिवार के सभी सदस्य भूखों मारे जा चुके हैं । मुझे अकेली जानकर लखनऊ में आवारा लड़कों ने तंग करना शुरू किया । मैंने कलकत्ता का बहुत नाम सुना था कि यहां हजारों गरीब-दुखिया सुख से जीते हैं, किंतु यहां भी रहम करने वाले कम हैं दोजखी कुत्तों की भरमार है ।

उसे गोपाल जी अपने घर में आश्रय देते है । उनके एक मात्र पुत्र का नाम राम जी है, जिसको, गोपाल जी ने, पांच वर्ष की उम्र से स्वयं पाला-पोसा है, क्योंकि उनकी पत्नी का तब देहांत हो गया था । दोनों पिता - पुत्र में गहरा स्नेह है ।

कलकत्ता में दंगे से पंद्रह दिन पूर्व गोपाल जी के पुराने मित्र और राम जी के फारसी-शिक्षक, मौलवी सदावतुल्ला और गोपाल जी में हिंदू-मुस्लिम विषय पर बहस होती है । मौलवी साहब बताते हैं-"मुहल्ले के मुसलमान जानते हैं कि बाबकी बेटी हिंदू नहीं है ।...लोग आपस में इसबात की सलाह कर रहे हैं कि उसे आपसे मांग कर फिर से दीन इस्लाम में मिला लें । मुसलमान अपनी औलाद को हिंदू के घर में, हिंदू की तरह, नहीं देख सकते ।" [1]

इस पर गोपाल जी कहते हैं-" उस दिन मुसलमान कहां थे , जब भिखारिन भूखों मर रही थी ? उस दिन दीन इस्लाम

---

1. - वही - पृ. 49-50

कहाँ था, जब अपने को मुसलमान कहने वाले कुत्ते उसके पाक दामन को गंदा करने पर उतारू थे।"[1]

दूसरे कमरे में रामजी नवाबजादी से कहता है कि तुम सब्जी लेने न जाया करो, क्योंकि मुसलमान तुम्हें हिंदू के घर से निकालने की धुन में हैं। कुछ दिन बाद कलकत्ता में साम्प्रदायिक दंगे शुरू हो गए। राम जी घर से बाहर गया था। नौकर आकर बताता है कि एक मुसलमान गुण्डे ने राम जी को छुरा भोंककर मार डाला।

गोपाल जी के साथ नवाबजादी राम जी के मर्दाने वस्त्र पहन कर, तलवारों को कमर में लगाकर, रामजी को ढूंढने निकलती है। एक गली में पांच-सात मुसलमान "अली-अली" करते हुए उन पर धावा बोलते हैं। नवाबजादी मारी जाती है। धावा करने वालों के पैर उखड़ जाते हैं। गोपाल जी को गहरा जख्म लगता है वे गली पार कर सड़क पर आते हैं और वहीं गिर कर दम तोड़ देते हैं।

उपरोक्त अधिकतर कहानियां प्रत्यक्ष घटनाओं और समाचारों में पढ़ी-सुनी खबरों को आधार बनाकर लिखी गयी हैं। ऐसी घटनाओं की अभिव्यक्ति में लोगों की बदली हुई मानसिकता के लिए शब्दों की गहरी पकड़, कलात्मक रूप-विधान में लेखकीय सर्जनात्मक क्षमता का परिचय देती है।

---

1. पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र": होली खेलो गोरी लाल, पृ.४९-५०

दो धर्मों और जातियों के टकराव की अवस्था में लेखकीय दायित्व-बोध और भी अधिक बढ़ जाता है कि कहीं वे पक्षपात पूर्ण दृष्टिकोण न अपना लें ।

मात्र यथार्थ घटनाएं और ज्यों के त्यों प्रसंग या ब्यौरे देए जाने से कलात्मकता की अवक्षेना का डर बराबर बना रहता है । साथ ही यह भी कि लेखकीय संवेदना किसी एक ही पाठक - वर्ग तक सीमित न रह जाए ।

इन कहानियों के रचना-विधान में कलात्मक संयम और संतुलन के साथ - साथ लेखकीय तटस्थता और वैचारिक निष्पक्षता देखी जा सकती है ।

तीसरा अध्याय

भारत - विभाजन सम्बंधी कहानियों की सम्वेदना :-

भारत-विभाजन सम्बंधी कहानियों की सम्वेदना=

1. विभाजन की निस्सारता:- तत्कालीन स्थितियों की माँग स्वरूप विभाजन को राजनीतिक रूप से दोनों देशों ने स्वीकार कर लिया था । असंख्य लोगों को विस्थापन की प्रक्रिया से गुजरना पड़ा । विस्थापितों के लिए यह सहज नहीं था कि वे जिस जगह रहे हैं, उसके लगाव से मुक्त हो सकें । जिस जमीन और वातावरण से वे पैदा हुए , उसकी खुराक और आबो-हवा में साँस ली, अगर उनको वहाँ से उखाड़कर अन्यत्र बसाया जाय तो दुबारा पनपने के प्रयास में मुरझा जाते हैं । नयी जमीन, नया वातावरण, नये लोगों के बीच, नये सिरे से जिंदगी की शुरूवात में उनको बार-बार पुरानी जगह बुलाती रही । उसकी याद उन्हें कचोटती, मन को बेचैन करती रही । वे सामान्य ढंग से जिंदगी की शुरूवात में जम नहीं सके । वे अपने वतन, जगह-जमीन और हमजोलियों की याद को सीने में लिये सिसकते रहे ।

विभाजन की निस्सारता आगे दी गयी कहानियों में प्रकट होती हैं । "मेरा वतन"(विष्णु प्रभाकर),"पानी और पुल" (महीप सिंह), अंतिम इच्छा"(बदीउज्जमा)

"मेरा वतन" के पास मि॰ पुरी के लिए दोनों देशों द्वारा बनाई गयी सीमा-रेखा व्यर्थ है । मि॰ पुरी लाहौर में पैदा हुए, पढ़े - लिखे और वहीं वकालत में प्रसिद्धि प्राप्त की । विस्थापित होकर अपने परिवार के साथ अमृतसर आते हैं । उनके लड़के अपना कारोबार जमा लेते हैं । मि॰पुरी भी वकालत

शुरू करते हैं, किंतु उनके मन के भीतर अपने वतन की याद हिलोरें मारती रहती हैं। , वे अपने परिवार से बिना बताये भेष बदलकर लाहौर जाते हैं। पाँच-छः दिन वहाँ गुजारने के बाद लौट आते हैं। यह सिलसिला बीच-बीच में चलता रहता है। घर वालों को जब उनके लाहौर जाने का पता चलता है तो वे उनसे पूछते हैं कि लाहौर क्यों जाते हैं। इस पर वे बताते हैं-"क्यों जाता हूँ क्योंकि वह मेरा वतन है। मैं वहाँ पैदा हुआ हूँ। वहाँ की मिट्टी में मेरी जिंदगी का राज छिपा है। वहाँ की हवा में मेरे जीवन की कहानी लिखी हुई है।[1] यह पीड़ा प्रत्येक विस्थापित व्यक्ति की थी। वे विभिन्न स्तरों पर अपने वतन से जुड़े हुए थे। वे वहाँ की मिट्टी से अपनी जिंदगी का रस पाते थे। वहाँ की हवा में उनके जीवन की कहानी लिखी थी। वहाँ की प्रत्येक जगह जानी-पहचानी थी और उस जगह से उनका रिश्ता जुड़ा हुआ था। वहाँ की जमीन में उनकी जड़े गहरी समाई हुई थी। इस प्रकार की जगह-जमीन से व्यक्ति का भावनात्मक रूप से लगाव सहज और स्वाभाविक है। जब मि॰ पुरी को पहचानकर एक मुसलमान गोली मार देता है तो वे कहते हैं-"मैं यहाँ से जा ही कहाँ सकता हूँ? यह मेरा वतन है....।"[2] मि॰ पुरी अपने वतन की यादों को भूल नहीं पाते हैं। जिन चीजों से उनका संबंध रहा था, उन्हें देखते हैं तथा उनसे मौन संवाद करते हैं। उनका बार-बार लाहौर आना और वहीं मृत्यु को प्राप्त होना

---

1. विष्णु प्रभाकर : मेरा वतन : पृ॰ 14
2. - वही - पृ॰ 19

राजनीतिक रूप से किये गये विभाजन पर व्यंग्य करता है तथा इसकी निस्सारता को दर्शाता है ।

"पानी और पुल" कहानी में विभाजन के चौदह वर्ष बाद, भारत से सिख तीर्थ-यात्री पाकिस्तान में स्थित सिख धर्म से संबंधित पवित्र स्थलों को देखने जाते हैं । रेलगाड़ी के रास्ते में सराई गाँव का स्टेशन पड़ता है । कहानी कहने वाले "मैं" की माँ विभाजन-पूर्व उसी गाँव में रहती थी । गाड़ी के स्टेशन पहुंचने पर सराई गाँव के लोग उनको सूखे मेवों की भेंट देते हैं और उनके परिवार वालों की खैरियत के बारे में पूछते हैं । यह ठीक है कि आदमी की कई बार राक्षसी प्रवृत्ति उभर आती है और उस दशा में वह विनाशक कार्य करता है। यह व्यवहार और प्रवृत्ति को समाप्त करने की दिशा में ही कार्य कर रहा है । विभाजन के दौरान इसी राक्षसी प्रवृत्ती के कारण लोगों ने आपसी सद्भाव को भुलाकर एक-दूसरे के साथ खून की होली खेली थी। किंतु जब वे होश में आये तब सभी कुछ खो चुके थे। इसी खो जाने और संबंधों के टूट जाने की पीड़ा को इस कहानी में व्यंजित किया गया है। सराई गाँव के लोग अपने द्वारा की गयी भयंकर गलती का पश्चाताप करते हैं। उनका प्रयास है कि पहली गलती को भुलाकर वही भाई-चारा दुबारा से कायम हो, इसीलिए वे कहते हैं-"भरजाई तुम अपने बच्चों को लेकर वापस आ जाओ, बोलो भरजाई, कब आओगी? अपना गाँव तुम्हें याद आताहै ?भरजाई, वापस आ जाओ...।"[1]

विभाजन से उपजी भयंकर साम्प्रदायिकता से लोगों ने अपने ही गाँव के लोगों को दूसरी कौम का समझकर वहाँ से भागने के लिए मज़बूर किया था । साम्प्रदायिकता का भूत उतरने पर लोगों को, भाई-चारे, सद्भाव और अपनों से बिछुड़ने की कसक, उनकी आत्मा को धिक्कारती है। सराई गाँव के लोगों की आत्मा ने विभाजन स्वीकार नहीं किया है तभी तो वे चाहते हैं कि इस गाँव से गए लोग वापस आ जाएं ।

---

1. - वही - पृ. 95

"अंतिम इच्छा" कहानी में कमाल भाई का अपने शहर गया की यादों से उसका इस कदर लगाव है कि वह कराची जाकर भी यहाँ की हवा में साँस लेता है, और गया की विशेषताओं को भूल नहीं पाता । वह महसूस करता है कि पाकिस्तान जाकर उसने गलती की है-"पाकिस्तान जाकर मैंने सख्त गलती की । अब्बा का कहा मान लेता तो अच्छा रहता । मेरी हालत धोबी के गधे की हो गयी है । न घर का न घाट का सोचता हूं मुल्क का बंटवारा न होता तो अच्छा था ।" ।

विभाजन ने लोगों को द्वन्द्वपूर्ण मन:स्थितियों में जीने के लिए मजबूर किया । वे पूरी तरह से एक वतन के होकर न तो जीवित रह सके और न मर ही सके ।

खोजने पर इस प्रकार की अन्य कहानियाँ भी मिल सकती हैं, जिन में देश विभाजन की निस्सारता मुखर होती है ।

2. साम्प्रदायिकता का विरोध:-

जिन दंगों और मार-काट की आशंका को देखते हुए देश के नेताओं ने विभाजन स्वीकार किया था, वही दंगे, विभाजन की घोषणा के साथ ही भयंकर रूप से भड़क उठे । सरकार दंगों को रोकने में असफल रही । सेना और पुलिस स्वयं भी साम्प्रदायिक हो गयी । सभी को अपनी दाढ़ी में लगी आग को पहले बुझाने की सूझी इन दंगों में लाखों की संख्या में लोगों का कत्ल हुआ कुंवारी लड़कियों के साथ उनके घर वालों के सामने बलात्कार

1.. - वही - पृ. 67

किया गया । बच्चों को पैर पकड़कर दीवारों से उनका सिर फोड़ा गया । औरतों की छातियां काट डाली गयी । लाखों लोगों को इस साम्प्रदायिकता में बेघर होकर शरणार्थी बनना पड़ा ।

ऐसे घोर हैवानियत के अंधकार में कुछ लोग ऐसे भी थे जो इंसानियत की मशाल लिए चल रहे थे तथा उन्होंने साम्प्रदायिक दंगों में फंसे, भटके और निराश्रित लोगों को सहारा दिया और उनको उनके संबंधियों के पास तथा सीमा-रेखा के उस पार सुरक्षित पहुंचाने का सराहनीय कार्य किया । साम्प्रदायिता के विरोध में ऐसी पवित्र भावनाओं की अभिव्यक्ति ये कहानियां करती हैं-"शरणदाता","बदला"(अज्ञेय), "खुदा खुदा की लड़ाई"(यशपाल), "ईश्वर द्रोही"(उग्र), "सिक्का बदल गया"(कृष्णा सोबती), "अमृतसर आ गया है"(भीष्म साहनी) और "टेबल लैंड"(उपेंद्र नाथ अश्क) ।

"शरणदाता" कहानी में साम्प्रदायिक दंगों में फंसे देविंदर लाल को अताउल्लाह के घर से आये खाने में जहर देकर मारने की कोशिश की जाती है । अताउल्लाह की बेटी जेबू उस जहर को काट कर देती है । वह ऐसे कुटिल माहौल में भी इंसानी फर्ज को निभा जाती है और उसके बदले में केवल यही इल्तजा करती है-"आपके मुल्क में अक्लीयत का कोई मज़लूम हो तो आप याद कर लीजिएगा । इसलिए नहीं कि वह मुसलमान है, इसलिए की आप इंसान हैं ।"[1] इंसानियत के सामने धर्म और

---

1. अज्ञेय : ये तेरे प्रतिरूप - पृ. 54

जाति गौण है। यहाँ हिंदू या मुसलमान मज़लूमकी सहायता और सुरक्षा की बात नहीं की गयी है अपितु मज़लूम इंसान की सहायता और सुरक्षा पर ही जोर दिया गया है।

"बदला" एक ऐसे सिख शरणार्थी की कहानी है, जिसका परिवार विधर्मियों के हाथों शेखूपुरा में मारा जा चुका है। वह प्रतिहिंसा से प्रेरित न होकर, रेलगाड़ी में दिल्ली से अलीगढ़ के बीच सफर करता है ताकि वह असहाय और आतंकित लोगों की मदद कर सके।

एक हिंदू महाशय दिल्ली में की गयी मुसलमान औरतों की बेइज्जती की बातें चटखारे ले लेकर सिख शरणार्थी से करना चाहते हैं। सिख शरणार्थी उन महाशय की जुबान बंद कराते हुए कहता है-"औरत की बेइज्जती औरत की बेइज्जती है, वह हिंदू या मुसलमान की नहीं, वह इंसान की माँ की बेइज्जती है।"[1] किसी दूसरे कौम की औरत की बेइज्जती क्या इसलिए की जाए कि वह हमारे कौम की नहीं है? वह किसी भी कौम से ताल्लुक रखती हो, है तो वह किसी की माँ बहिन, बेटी और बहू ही? उसके भीतर भी वही भावनाएं हैं जो किसी भी कौम की औरत में हो सकती हैं। वह जननी होने के नाते पूजनीय है। सिख शरणार्थी के साथ शेखूपुरा में जो अत्याचार हुआ, उससे वह प्रतिहिंसा पर उतारू न होकर, मनुष्य की भलाई में कार्य कर रहा है। दोनों ओर के लोगों में प्रतिहिंसा में ही हत्या, बलात्कार, आगजनी और लूटपाट करके अपने ऊपर हुए अत्याचार का बदला लिया। किंतु इस प्रकार

----

1. - वही - पृ. 79

के बदले की भावना से किये गए घिनौने कारनामों से क्या वास्तव में उन पर हुए अत्याचार का बदला उतर सका? क्या उन्होंने अपने ऊपर हुए अत्याचार के बदले में किसी के भाई, बहिन, माँ-बाप , बहू, बेटी पर अत्याचार नहीं किया ? जो दर्द और पीड़ा उनको मिली थी वैसी ही स्थिति में क्या उन्होंनें दूसरों को नहीं ला खड़ा किया? क्या कौमों के हिसाब से लोगों में दर्द और संवेदनाओं का अहसास अलग-अलग होता है ? इस प्रकार के अनेकों सवालों को उभारती हुई यह कहानी मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना करती है । सिक्ख शरणार्थी अपने ऊपर हुए अत्याचार का बदला किस प्रकार ले रहे हैं ? वे बताते हैं-"मैं जानता हूँ कि उसका मैं बदला कभी नहीं ले सकता-क्योंकि उसका बदला हो ही नही सकता । मैं बदला ले सकता हूँ-और वह यही, कि मेरे साथ जो हुआ है, वह और किसी के साथ न हो । इसलिए दिल्ली और अलीगढ़ के बीच इधर और उधर लोगों को पहुंचाता हूँ मैं, मेरे दिन भी कटते हैं और कुछ बदला चुका भी पाता हूँ।"[1]

"खुदा खुदा की लड़ाई":- कहानी में मूलाँताई लाहौर के सैदमिट्ठा बाजार में अपने मकान को छोड़कर नहीं जा सकी, जबकि हिंदुओं के सारे घर खाली हो चुके हैं । नसरू अपने पिता से कहता है कि वह डायन कहाँ जाएगी, अपने सोने चाँदी पर साँप बनी बैठी है । मूलाँताई सम्पन्न है । उसके अपने मकान हैं , जिसमें किरायेदार रहते हैं । यहा बुढ़िया की सम्पन्नता के प्रति नसरू की ईर्ष्या प्रकट होती है । सैदमिट्ठा बाजार में साम्प्रदायिक उत्तेजना से बाकले आवारा मुसलमानों ने लूटपाट

----

1. - वही - पृ. 79

और आगजनी की । सरकार ने स्थिति को काबू में करने के लिए कर्फ्यू लगा दिया । बुढ़िया रात को कर्फ्यू में अपनी पोटली बगल में दबाए वहाँ से निकल भागना चाहती है । नसरू सोना-चाँदी के लालच में बुढ़िया को छुरा भोंककर मार देता है और पोटली छीनकर ले आता है । पोटली को अपनी कोठरी में लाकर खोलता है तो उसमें से एक पत्थर की बनी भगवान की मूर्ति भर निकलती है । उसका पिता फज्जे क्रोध और व्यंग्य से कहता है-"बेड़ा गरक होये तेरा , मासूम बूढ़ी का खून कर दिया । काफिर अपने पत्थर के खुदा को लिए भागी जा रही थी अपने पत्थर के खुदा से तेरे खुदा का सिर फोड़ देती । तूने अपने खुदा को बचा लिया।"[1] कहानी की इन पंक्तियों में साम्प्रदायिकता पर करारा व्यंग्य किया गया है । मुसलमान मूर्तिपूजा में विश्वास नहीं करते, जबकि हिंदू मूर्तिपूजक हैं । हिंदुओं की भगवान की पत्थर की मूर्ति में अटूट आस्था रहती है और यह आस्था मुसीबत के समय और भी अधिक बढ़ जाती है । ऐसे समय में वे अपने आप को उसी के भरोसे पर छोड़ देते हैं । हिंदुओं की इस आस्था से मुसलमानों का कुछ बनता-बिगड़ता नहीं है । फज्जे द्वारा किया गया यह मार्मिक व्यंग्य साम्प्रदायिक भेदभाव पर करारा प्रहार करता है ।

"ईश्वर द्रोही" कहानी के गोपाल जी नास्तिक हैं । उनका विश्वास केवल मनुष्यता में है । वे अपने घर में मुसलमान भिखारिन को आश्रय देते हैं तथा उसको अपनी बेटी के समान

---

1. यशपाल :- सच बोलने की भूल - पृ. 105-106

मानते हैं । गोपाल जी के मित्र मौलवी सदाअतुल्ला द्वारा यह कहने पर कि मुहल्ले के लोग जानते हैं कि आपकी बेटी हिंदू नहीं मुसलमान है और मुसलमान सलाह कर रहे हैं कि उसे आपसे मांगकर फिर से दीन इस्लाम में मिला लें । इस पर गोपाल जी कहते हैं-"उस दिन मुसलमान कहाँ थे, जब भिखारिन भूखों मर रही थी ? उस दिन दीन इस्लाम कहाँ था, जब अपने को मुसलमान कहने वाले कुत्ते उसके पाक दामन को गंदा करने पर उतारू थे ? अरे यारो ! बुग्ज़, शैतानी, बदमाशी और लड़ाई का नाम दीन इस्लाम नहीं है । काहे को खुदा और मज़हब को बदनाम करने पर कमर कसते हो ?"[1] भिखारिन गोपाल जी के घर में बेटी की तरह रह रही है । यह बात साम्प्रदायिक तत्वों के गले नहीं उतरी । इससे उनका दीन इस्लाम खतरे में नज़र आता है । "उग्र" जी ने यहाँ धर्म के खोखले अभिमान पर मार्मिक व्यंग्य किया है । मुसलमान उस भिखारिन को हिंदू के घर से निकाल कर दीन इस्लाम की कद्र करना अपना फर्ज समझते हैं, जबकि गोपाल जी किसी दिखावटी धर्म से प्रेरित होकर नहीं अपितु इंसानियत के नाते इंसान की कद्र कर रहे हैं । धर्म को ध्यान में रखकर की जाने वाली आदमी की पहचान मात्र धोखा है ।

"सिक्का बदल गया" कहानी का पात्र शेरा जिसको शाहनी ने अपने पुत्र की भाँति पाला-पोसा है, वह भी साम्प्रदायिक दंगों में अपनी क्रूरता को छोड़कर मानवीय धरातल पर आ जाता है-"प्रतिहिंसा की आग शेरे की आँखों में उतर

---

1. पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र": होली ऐसी खेलो लाल: पृ. 50

आयी । गड़ासे की याद हो आयी । शाहनी की ओर देखा- नहीं नहीं, शेरा इन पिछले दिनामें में तीस-चालीस कत्ल कर चुका है । पर-पर वह ऐसा नीच नहीं ।"[1] शेरा अपने बचपन की याद करता है, जब शाहनी ममता भरे हाथ से दूध का कटोरा उसे पीने के लिए देती थी । निश्छल ममता के बीच धर्म को लेकर खड़ी की गयी दीवार बेमानी साबित होती है । एक ही गांव में रहने वाले लोग आपसी भाई-चारे, मेल-मिलाप के रिश्तों में बंधे होते हैं , एक-दूसरे की मदद करते हैं । शेरा के प्रति शाहनी की सद्भावनाओं को आज की बदली हुई साम्प्रदायिक स्थिति निरर्थक सिद्ध नहीं कर पायी ।

"अमृतसर आ गया है" कहानी के अंत में हिंदू बाबू की साम्प्रदायिकता-पूर्ण मानसिकता में परिवर्तन दिखाया गया है । जो अभी कुछ देर पहले अमृतसर स्टेशन पर पठानों को मारने के लिए लोहे की एक छड़ लेकर आया था तथा पठानों को डिब्बे में न पाकर झुंझला रहा था । उसने अपनी पत्नी के साथ डिब्बे में चढ़ने की कोशिश करते हुए मुसलमान के सिर पर उसी लोहे की छड़ से प्रहार किया । वह मुसलमान किसी कटे पेड़ की भांति नीचे गिर गया । बाबू डिब्बे के खुले दरवाजे के पास बुत बना खड़ा रहा । फिर वह अज्ञात प्रेरणावश दरवाजे से बाहर पीछे की ओर देखने लगा । उसे दूर अंधियारा पुंज-सा नज़र आ रहा था । उसने एक झटके से छड़ को डिब्बे

---

1. कितने टोबा टेक सिंह : पिपुल्स पब्लिशिंग हाउस पृ. 93-94

से बाहर फेंक दिया ।" उसने ध्यान से अपने कपड़ों की ओर देखा, अपने दोनों हाथों की ओर देखा, फिर एक-एक करके अपने दोनों हाथों को नाक के पास ले जाकर सूंघा मानों जानना चाहता हो कि हाथों से खून की बू तो नहीं आ रही है । "[1] हिंदू बाबू का मानसिक-संतुलन उसके क्षणिक आवेश को काबू में नहीं रख सका । उस आवेश के समाप्त होते ही उन्हें अपने हाथों किए गए दुष्कर्म पर अफसोस और शर्म महसूस होती है ।

"टेबल लैंड" अश्क की कहानी में दीनानाथ पंजाब से आये हिंदू शरणार्थियों को कंबल देने के लिए चंदा एकत्र कर रहा है । मुसलमानों से चंदा मांगने में वह संकोच करता है, क्योंकि उसने समाचार-पत्रों और खबरों में हिंदुओं पर मुसलमानों द्वारा किए गए अत्याचारों की कहानियां पढ़ी तथा सुनीहैं । उसका एक मुसलमान मित्र कासिम जो उसी की तरह फिल्मी कलाकार है । उसको मुसलमानों में भी चंदा एकत्र करने के लिए प्रेरित करता है । उसका विचार है-"पंजाब से आने वाले हिंदू-सिख बड़े कटु होंगे । जब तक वे दुखी रहेंगे, उनका साम्प्रदायिक क्रोध शांत न होगा । और जब तक उनका साम्प्रदायिक क्रोध शांत न होगा, वे अपने ही ऐसे निर्दोष मुसलमानों की हत्या करने से बाज़ न आएंगे ।"[1] विभाजन के बाद बदले की भावना से ही अधिक मारकाट हुई थी । लोगों ने अपने ऊपर हुए अत्याचार का बदला निर्दोष विधर्मियों की हत्या करके लिया । ऐसे समय में *निर्दोषों* निर्दोषों की हत्या न हो सके इसके लिए साम्प्रदायिक क्रोध को शांत करने के लिए

----

1. सं० नरेंद्र मोहन: भारत-विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां- पृ० 89

शरणार्थियों की उचित मदद और सहानुभूति ही सबसे बड़ा और कारगार उपाय हो सकता था । कासिम द्वारा सुझाया गया विचार अप्रत्यक्ष रूप से साम्प्रदायिक क्रोध को शांत कर सद्भावना का वातावरण तैयार करने में सहायक सिद्ध हो सकता है ।

3. सांस्कृतिक समन्वय: -

भारत में सदियों से हिंदू-मुसलमान मिल-जुल कर साथ रहते आये थे । मुस्लिम-लीग के नेताओं ने सदियों के मेल-जोल से प्राप्त जातीय एकता और सांस्कृतिक संस्कार को नष्ट करने का कुचक्र रचा । राजनीतिक चालों और हथकंडों से दंगे कराए गए । इस चाल को सामान्य मुसलमान समझ न सके और उनकी चालों के शिकार हो गए । इसका लाभ उठाते हुए मि. जिन्ना ने हिंदू-मुस्लिम संस्कृति में भेद बताकर मुसलमानों के लिए पाकिस्तान की मांग की "..हिंदुओं और मुसलमानों का संबंध दो विभिन्न दर्शनों, सामाजिक रीति-रिवाजों और साहित्यों से हैं । इनमें न तो परस्पर विवाह संबंध ही हो सकते हैं और न इनका खान-पान ही एक साथ हो सकता है, और निश्चय ही इनका संबंध ऐसी दो विभिन्न संस्कृतियों से है जिनके विचार और धारणाएं परस्पर विरोधी हैं ।..ऐसे दो राष्ट्रों को एक ही राज्य में जोतना जबकि इनमें से एक अल्पसंख्यक और दूसरा बहुसंख्यक है , असंतोष को बढ़ावा देना है ।"[1] भारतीय सांस्कृतिक इतिहास के निर्माण में मुसलमानों के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता । फिर भी

---

1. राम गोपाल- भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास पृ. 254-255

जिन्ना द्वारा दिखाए सब्जबाग के बहकावे में आकर बहुत-से मुसलमानों अपनी अलग पहचान बनाने की कोशिश की ।

सांस्कृतिक समन्वय पर जोर देने वाली कहानियां हैं- "अंतिम इच्छा" {बदीउज्जमा} {कितने पाकिस्तान" {कमलेश्वर} और "खुदा खुदा की लड़ाई" {यशपाल} "अंतिम इच्छा" कहानी के पात्र अहमद इमाम कांग्रेस, गांधी जी और मौलाना अबुल कलाम के बड़े भक्त थे । इसी कारण उनको लोग गांधी जी कहते थे । अपनी गांधीवादी विचारधारा के कारण मुसलमान उन्हें कौम का गद्दार भी कहते थे । तथा उनकी पिटाई भी की जा चुकी थी । गांधी भाई कहते थे-"धर्म को छोड़कर हिंदुओं और मुसलमानों में कोई अंतर नहीं है । जो अंतर दिखाई देता है, वह केवल बाहरी है । इससे अधिक अंतर तो खुद मुसलमानों के विभिन्न वर्गों और हिंदुओं के विभिन्न वर्गों में दिखाई दे जाएगा । क्या तुमने कभी गौर किया है कि आम मुसलमान की जिंदगी जन्म से लेकर मौत तक जिन रीति-रिवाजों के दायरे में घूमती हैं वे आम हिंदू से जरा भी अलग नहीं हैं ? जन्मोत्सव, छठी की रस्म, शादी ब्याह के गीत, यहां तक की मरने के बाद बहुत-से संस्कार बिलकुल वैसे ही हैं जैसे कि हिंदुओं में ।"[1] इस प्रकार सांस्कृतिक रूप से हिंदुओं और मुसलमानों में जो अंतर दिखते हैं, वे बहुत गौण हैं, किंतु इन्हीं को आधार बनाकर पाकिस्तान समर्थक नेताओं ने दो राष्ट्र का नजरिया अपनाया जो कि कितना गलत और बेबुनियाद था ।

---

1. सं० नरेंद्र मोहन:- भारत-विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां - पृ० 7।

"कितने पाकिस्तान" कहानी में बन्नों के अब्बा ड्रिल मास्टर एक मुसलमान होकर भरथरी पर हिंदी में काव्य लिख रहे हैं। उन्हीं के मजहब के लोगों ने उनका विरोध किया। उनको कहा गया कि यह तुरक नहीं है, यहीं का कोई काछी-कहार है। लोगों ने उनसे अपने संबंध तोड़कर उन्हें अलग-सा कर दिया। मगर ड्रिल मास्टर भरथरी नामा लिखते रहे। क्या पाकिस्तान बनने पर एक मुसलमान का हिंदू पर काव्य लिखना, धर्म च्युत हो जाना है? लोगों की इस प्रकार की प्रतिक्रिया पाकिस्तान बनने के साथ ही क्यों दिखाई दी, जबकि हिंदी साहित्य के इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण भरे पड़े हैं, जिनमें मुसलमान कवियों ने हिंदू संस्कृति से सम्बन्धित लोगों पर अनेक काव्य-रचनाएं की हैं और ऐसे कवियों ने दो संस्कृतियों के समन्वय के लिए सराहनीय योगदान दिया है। यही कहा जा सकता है कि इसके पीछे मुस्लिम लीग के नेताओं के द्वारा किया गया जातीय और संस्कृति-विरोधी प्रचार ही कार्य कर रहा था।

विभाजन-पूर्व हिंदू-मुसलमान भेद-भाव के बिना एक-दूसरे की आवश्यकताओं को पूरा किया करते थे। वे एक-दूसरे के काम-धन्धों पर आश्रित थे। छोटे-छोटे धंधे करने वालों के साथ भी कितनी अपनत्व की भावना लोगों में थी। वे उनके साथ नाते - रिश्तों से पेश आते थे। उनका एक ही जगह पर रहना और प्रतिदिन का मिलना-जुलना था। मज़हब और सम्प्रदाय की वहाँ बुरी परछाई भी न पड़ती थी। "खुदा खुदा की लड़ाई" कहानी के फज्जे को "मुद्दतों से गली के सब बच्चे - बच्चियाँ और युवा-युवतियाँ उसे मामा कहते आये थे। बहु-

बेटियाँ सिर पर आँचल लिए बिना भी उसे रँगने के लिए चुन्नियाँ, साड़ियाँ और पगड़ियाँ थमा जाती थीं । रंग मन माफिक न होने या कलफ और अबरक कम होने पर उससे लड़ भी लेती थी ।"[1]
प्रस्तुत उदरण से पता चलता है कि लोग आपस में कितने मेल-मिलाप से रहते थे । ऐसे में लड़ना-झगड़ना भी आपसी प्रेम को प्रकट करता है और हिंदू स्त्रियों का सिर पर बिना आँचल लिए फज्जे से कपड़े रंगवाने जाना भी उनके आपसी विश्वास और सद्भाव की गवाही देता है ।

इस प्रकार अनेक हिन्दी कहानियों में साम्प्रदायिकता का विरोध तथा साम्प्रदायिक सद्भाव का समर्थन मिलता है ।

4. उदार मानवीयता पर बल:-

दंगों के काले दिनों में हुए मानव-विरोधी कारनामों में कुछ ऐसे लोग भी थे, जो यह मानते थे कि दो देशों में विभाजन की सीमा - रेखा खींचने से, उनमें रहने वाले लोगों के दिलों के बीच ऐसी कोई सीमा-रेखा नहीं खींची जा सकती । दोनों ही तरफ ऐसी संवेदनशील मानवीय सोच के लोग थे । जिन्होंने सदियों पुरानी संस्कृति और सभ्यता को मिटने से बचाने के लिए उदार मानवीयता का परिचय दिया ।

विभाजन के दौरान लिखी गयी उदार मानवीयता पर बल देने वाली कहानियाँ हैं-"मलबे का मालिक"(मोहन राकेश)"मेरी माँ कहाँ" (कृष्णा सोबती),"पानी और पुल"(महीप सिंह),"मैं जिंदा रहूँगा" (विष्णु प्रभाकर), "नारंगियाँ", "रमते तत्र देवता" (अज्ञेय) "ईश्वरद्रोही" (पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र") "कितने पाकिस्तान" (कमलेश्वर) ।
"मलबे का मालिक" के गनी मियाँ पाकिस्तान से विभाजन के साढ़े सात वर्ष बाद अमृतसर आते हैं । बाजार बासाँ में विभाजन-पूर्व उन्होंने अपना मकान, बनवाया था, किंतु दंगों के दौरान हुई आगजनी और

---

1. यशपाल : सच बोलने की भूल: 97

और हिंसा में उनको मकान की जगह मलबे का ढेर मिलता है । उसे यह पता कल ही गया था कि उसका लड़का चिरागदीन और उसकी पत्नी तथा दो लड़कियाँ दंगों के शिकार हो गए हैं । चिरागदीन को रक्ख़ा पहलवान पर अटूट विश्वास और आस्था थी । वह उसी के भरोसे पाकिस्तान जाने से इंकार करता रहा था, किंतु पाशविकता के हिंसक दौर में, रक्ख़ा पहलवान ही उसका काल बन गया ।-"चिराग उसका छुरे वाला हाथ पकड़कर चिल्लाया,"न रक्खे पहलवान, मुझे मत मार । हाय। मुझे बचाओ । जुबेदा । मुझे बचा ।"। चिरागदीन के विश्वास और आस्था की बलि चढ़ाई जाती है । गनी मियाँ रक्खे पहलवान से सहज आत्मीयता से मिलता है । वह यह नहीं जानता कि उसके परिवार का संहारकर्ता यही है । गनी मियाँ से रक्ख़ा का सामना होने पर वह अपने आप को अपराधी महसूस करता है । दूसरी ओर गनी मियाँ का सहज विश्वास और आत्मीयता रक्ख़ा पहलवान के प्रति व्यक्त होती है-"जी हल्कान न कर, रक्खिया । जो होनी थी, सो हो गई । उसे कोई लौटा थोड़े ही सकता है । ख़ुदा नेक की नेकी रखे और बद की बदी माफ करे । मेरे लिए चिराग नहीं, तो तुम लोग तो हो । मुझे आकर इतनी ही तसल्ली हुई कि उस जमाने की कोई तो यादगार है । मैंने तुमको देख लिया, तो चिराग को देख लिया । अल्लाह तुम लोगों को सेहतमंद रखे । जीते रहो और खुशियाँ देखों ।" [2] अपने पुत्र और उसके परिवार की हुई हत्याओं की पीड़ा को सहन करते हुए भी रक्खे पहलवान के प्रति गनीमियाँ की सहज आत्मीयता उदार मानवीय संबंधों का गहरा अहसास कराती है ।

"मेरी माँ कहाँ:- कहानी में यूनस खाँ जो एक क्रूर सैनिक है, जिसने अनेकों काफिरों का कत्ल किया है की एक घायल मुच्छित बच्ची

---

1. सं. अनीता राकेश : मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियाँ- पृ. 227
2. - वही - पृ. 230

के लिए कितना मानवीय हो उठता है-"दिमाग सोच रहा है-वह क्या है ? इसी एक के लिए क्यों ? हजारों मर चुके हैं । यह तो लेने का देना है । वतन की लड़ाई जो है । दिल की आवाज है - चुप रहो..इन मासूम बच्चों की इन कुरबानियों का आजादी के खून से क्या ताल्लुक ?" । ऐसे हिंसक वातावरण में वह अपने दिल की आवाज सुनकर सद्कर्म की ओर बढ़ता है । उस बच्ची का वह मेयो हास्पिटल में इलाज कराता है तथा उसको अपना बच्चा बना कर पालना चाहता है । यूनस खाँ को अपनी बहिन नूरन की याद आती है, जो छोटी उम्र में ही काल का ग्रास बन गयी थी । इस घायल मूर्च्छित बच्ची को पाकर उसमें कोमल मानवीय भावनाएं हिलोरे मारती हैं । वह राक्षसी प्रवृत्ति छोड़कर मानवीय हो उठता है ।

"पानी और पुल" कहानी में विभाजन के चौदह वर्ष बाद सिख तीर्थ यात्री पाकिस्तान में स्थित सिख धर्म से संबंधित पवित्र स्थलों को देखने के लिए जाते हैं । रास्ते में सबाई गाँव पड़ता है, जिसमें कहानी कहने वाले "मैं" की माँ रहा करती थी । उस गाँव के लोग उनकी तथा उनके संबंधियों की कुशल-क्षेम पूछते हैं तथा भेंट देते हैं-"लोग हमारे संबंधियों में सबकी कुशल-क्षेम पूछते हुए अपने हाथ की पोटलियाँ हमें और माँ को थमाते जा रहे थे । उनमें बादाम, अखरोट, किशमिश आदि सूखे मेवे बंधे हुए लग रहे थे ।" [2] "मैं" की माँ इस प्रकार मिली आत्मीयता से रो रही थी । दंगों के दौरान आदमी इतना वहशी हो गया था कि उसने अपने पड़ोसियों का भी लिहाज नहीं किया , उनको उनके ही घरों से, गाँव से और धरती से खदेड़ दिया था । जब उनके वहशीपन का ज्वार उतरा तो वे कितने सहृदय बन कर

---

1. सं. नरेंद्र मोहन: भारत-विभाजन:हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ-57
2. - वही - पृ. 94

अपने किए का पश्चाताप करते हैं और उन खदेड़े गए लोगों को फिर से उसी धरती पर आकर बसने के लिए प्रार्थना करते हैं ।

"मैं जिंदा रहूंगा" कहानी का प्राण, जिसका परिवार हिंसा का शिकार हो गया है उसने लाशों के ढेर से युवती राज को उठाया था, जिसके साथ एक बच्चा भी था । राज उस बच्चे को एक ट्रेन से अपने सामान के भुलावे में उठा भागी थी । प्राण ने दोनों को आश्रय दिया । उस बच्चे (दिलीप) को वे दोनों अपना ही बच्चा समझकर पाल-पोस रहे थे कि एक दिन उस बच्चे के वास्तविक मां-बाप आ जाते हैं तथा दिलीप को उनसे ले जाते हैं । राज का दिलीप के प्रति ममत्व और लगाव आड़े आता है, इस पर प्राण उसे समझाता है-"तुम उनका खोया लाल उन्हें सौंप रही हो इस कर्तव्य में जो सुख है, उससे बड़ा सौभाग्य और क्या होगा ! उस सौभाग्य को क्षणिक कायरता के वश होकर ठुकराओ नहीं ।"[1] राज अपने पति और दो बच्चों के बारे में यह नहीं जानती कि इन दंगों में वे जीवित भी हैं या नहीं । वह दिलीप को पाकर अपने परिवार की याद को भूल रही थी, किंतु दिलीप के वास्तविक मां - बाप के होते हुए वह उसे अपने पास न रख पाने के लिए विवश थी । एक मां की बच्चे को खोकर क्या पीड़ा होती है ? वह जानती है, क्योंकि उसे अपने बच्चों और पति को इस हादसे में खोना पड़ा था । राज की उदासी के कारण प्राण उसे दिल्ली ले आया । यहां प्राण के साथ राज के पति की भेंट होती है । वे प्राण से बताते हैं कि वे मुसीबत के समय राज की रक्षा नहीं कर सके तथा उनके दो बच्चों में से एक बच्चा जीवित है । राज अपने पति के साथ चली जाती है । प्राण सोचता है-"सुख भी कैसा छल करता है । जाकर लौट आता है । राज को पति मिला, पुत्र मिला । दिलीप को मां-बाप मिले । और मुझे ...मुझे क्या मिला...।"[2] प्राण के लिए यही

---

1. - वही - पृ. 116

2. सं. नरेंद्र मोहन: भारत विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां: पृ. 12।

सच्चा आनंद है कि जिनको उसने आश्रय दिया वे पुन: अपने रिश्तेदारों से मिल गए । प्राण का व्यक्तित्व क्षुद्र स्वार्थों से ऊपर उठा हुआ, मानवीय संवेदनाओं से युक्त, अदम्य उत्साह और साहस का प्रतीक है ।

"नारंगिया" कहानी के दोनों शरणार्थी भाई हरसू और परसू अपनी सारी जायदाद पाकिस्तान में गवां कर आये हैं । वे अभावग्रस्त हैं, आजीविका का कोई साधन नहीं । एक मुहल्ले में दीवार की मेहराब को अपना घर बनाए हैं । हरसू वहीं सड़क पर नारंगिया सजाकर दुकान कर लेता है । उस मुहल्ले में गरीबी डेरा डाले पड़ी है । बच्चे नारंगियों को हसरत भरी नज़र से देख तो सकते हैं, किंतु उन्हें खरीदने की सामर्थ्य उनकी नहीं है । दोनों भाई दयालु हैं, किंतु बच्चों की वे मजबूरी समझते हैं । हरसू एक रोती हुई बच्ची को नारंगी देता हुआ कहता है-"ले, रो मत, ले जा । पैसे जब होंगे तब दे देना नहीं तो न सही ।"[1] इस पर उसका बड़ा भाई परसू उसे डाँटता है । मगर जब वह स्वयं बच्चों को नारंगियों की तरफ ललचाई नज़र से देखते हुए देखता है, तब अपने भाई से कहता है "अबे, दे दे न नारंगी-उन्हें ऐसे देखते देख तुझे तरस नहीं आता-शरम नहीं आती ? तू इंसान का बेटा है..चल, पैसे मैं देता हूँ - निकाल सबको नारंगियाँ।"[2] उन दोनों भाइयों में बच्चों प्रति दया और ममता की भावना है । वे गरीब बच्चों की मजबूर स्थिति को समझते हैं । उनकी भी स्थिति ठीक नहीं है । अभाव और गरीबी में वे भी जी रहे हैं, किंतु उनके भीतर मानवीय कोमल भावनाएं हैं, जो बच्चों की दयनीय स्थिति के सामने पिघलने लगती हैं ।

---

1. अज्ञेय : ये तेरे प्रतिरूप: पृ. 24
2. - वही - पृ. 27

"रमते तत्र देवता" कहानी में हिंदू-समाज की इस मान्यता पर व्यंग्य किया गया है कि जहाँ नारी की पूजा होती है, वहाँ देवता वास करते हैं । मगर क्या वास्तव में नारी को हिंदू-समाज और घर में सम्मान मिल पाता है । हिंदू-समाज में नारी के प्रति किए जाने वाले असम्मान और उपेक्षा की क्रूर और संकीर्ण मनोवृत्ति पर चोट की गई है ।

कलकत्ते में दंगे के कारण एक स्त्री को गुरूद्वारे में रात बितानी पड़ती है । सुबह बिशन सिंह उसे उसके पति के घर ले जाता है । पति उस स्त्री को घर में रखना स्वीकार नहीं करता , जबकि वह स्वयं भी दंगे की वजह से एक मित्र के घर रात गुजारकर आया है । वह अपनी स्त्री से कहता है-"तुम रात को क्या जाने कहाँ रही हो, सवेरे तुम्हें यहाँ आते शरम न आई ?" [1] तब बिशन सिंह सशस्त्र सिखों को साथ लेकर आता है तथा उस स्त्री के पति को मजबूर करता है कि वह अपनी पत्नी को स्वीकार करके घर में रखे ।

समाज में पुरूष की प्रधानता है । उसी के निर्णय पर नारी का जीवन निर्भर है । वह स्त्री की मजबूरी और परिस्थितियों को अनदेखा कर उस पर नाजायज हक और बदचलनी का झूठा आरोप भी लगा सकता है । दोनों स्त्री-पुरूष परिस्थिति की मारी स्वस्थ हो घर नहीं लौट पाते । अलग-अलग रात गुजारने के लिए मजबूर हैं । फिर भी दोष स्त्री को ही दिया जाता है, जबकि अपने घर न लौट पा सकने के कारण पुरूष भी उतना ही दोषी है । कहानी में अपनी पत्नी की वास्तविकता और परिस्थितियों की मजबूरी को न समझकर किसी गलत निर्णय पर पहुँचना उसकी बीमार मानसिकता का ही परिचायक है ।

"ईश्वर द्रोही" कहानी में मुसलमान भिखारिन को, जो लखनऊ के नवाबी खानदान से ताल्लुक रखती है नवाबी समाप्त हो जाने पर

---

1. - वही - पृ. 70

दर-दर की ठोकरें खानी पड़ी । यहाँ तक कि उन्हें मुँह छिपाकर भीख भी माँगनी पड़ी और भीषण भुखमरी के शिकार होकर उसके परिवार के लोग एक-एक करके काल का ग्रास हो गए । परिवार की में जब कोई नहीं बचा तब यह भिखारिन कलकत्ता में आ गयी । अपने परिवार की बरबादी की कहानी वह गोपाल जी को सुनाती है । गोपाल जी उसे अपने द्वार में आश्रय देते हैं । भिखारिन के यह कहने पर कि वह मुसलमान है, तो गोपाल जी कहते हैं-"..मुसलमान भी आदमी हैं, हिंदू भी । मैं आदमीपरस्त हूँ, हिंदू या मुसलमान परस्त नहीं ।" ।

उनका वास्तविक विश्वास धर्म से बढ़कर आदमी में हैं । धर्म को दृष्टि में न लाकर गोपाल जी ने केवल आदमी की ही सहायता करने में अपनी सच्ची उदार मानवीयता का परिचय दिया है ।

"कितने पाकिस्तान" कहानी का मंगल भिवण्डी में अपने दादा के मकान में आता है । कुछ दिन पहले वहाँ दंगे हुए थे, इसलिए बाहर वाला समझकर मंगल को पुलिस तहकीकात के लिए थाने ले जाती है । ऐसे विकट परिस्थिति में बन्नों के अब्बा ने इंसानियत के नाते थाने में मंगल की सफाई पेश की । मंगल सोचता है-"उस वक्त उनका मुसलमान होना कारगर साबित हुआ। एक मुसलमान हिंदू के लिए निर्दोषिता का बयान दे, यह बड़ा सबूत था ।" 2 बन्नों के अब्बा और मंगल के बीच खून या धर्म का रिश्ता नहीं है, बल्कि एक मानवीय संवेदना का रिश्ता है ।

बन्नों के अब्बा मंगल को बताते हैं कि उसके पिता की बाई बाँह हमें बचाने के लिए दंगाइयों से हुई मुठभेड़ में कट गयी-"द्वार के सामने ही मारकाट हुई । वे न होते तो शायद हम लोग जिंदा भी

---

1. पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र": ऐसी होली खेलो लाल-पृ. 45
2. सं. नरेंद्र मोहन: भारत-विभाजन की हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ-47

न बचते । हमला तो हम पर हुआथा । वे गली में उतर गये । तभी बाह पर वार हुआ । बाई बाह कटकर अलग गिर पड़ी । लेकिन उनकी हिम्मत •• अपनी ही कटी बाह को जमीन से उठाकर वे लड़ते रहे •••।"[1] एक हिंदू द्वारा अपने मुसलमान पड़ोसियों की रक्षा करना, मानवीय कर्तव्यों की गहरी पहचान कराता है ।

5• क्षेत्रिय लगाव :

विभाजन होने पर लोगों को विवश होकर अपनी जमीन से उखड़ना पड़ा । इस विवशता के पीछे उनका घर, पड़ौस, मित्र और क्षेत्रिय रंगत के प्रति अटूट लगाव ही कार्य कर रहा था । इस लगाव के एहसास को व्यक्त करने वाली कहानियां है-"कितने पाकिस्तान" (कमलेश्वर), "अंतिम इच्छा", परदेशी" (बदीउज्जमा), "मेरा वतन" (विष्णुप्रभाकर), "क्लेम" (मोहन राकेश) ।

"कितने पाकिस्तान" पाकिस्तान बनने पर मंगल के गांव में दंगे की संभावना इसलिए होती है कि वह एक मुसलमान लड़की बन्नो से प्रेम करता है । मंगल को गांव छोड़ने के लिए मजबूर होनापड़ता है । वह सोचता है-"••क्या कभी सोचा था कि इस तरह मेरा घर छूट जाएगा ? अपने शहर से बेइज्जत होकर कोई भी चैन नहीं पाता । मुझे वे गलियां याद आ रही थी, जिनमें बन्नों आने की कोशिश करती थी मैं चुंगी पर बैठकर कितनी प्रतीक्षा करता था ।"[2] पाकिस्तान बनने पर जिस प्रकार की पीड़ा विस्थापितों को झेलनी पड़ी थी, उस प्रकार की पीड़ा मंगल की नहीं है । पाकिस्तान बनने पर लोगों की मानसिकता भी साम्प्रदायिक हो गयी थी तथा मंगल का बन्नों से प्रेम करना दंगे का कारण बन सकता था । उसे तो अपने ही देश में अपने ही गांव से निकलकर दरवेश बनना पड़ा था । फिर भी उसे अपना घर शहर और वे गलियां याद आती हैं, जिनसे होकर उसकी प्रेमिका उससे

1• - वही - पृ• 49

2• सं• नरेंद्र मोहन: भारत विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां-पृ•39

मिलने आती थी ।

"अंतिम इच्छा" कहानी में कमाल भाई और असिस्टेंट स्टेशन मास्टर लालवानी की यही पीड़ा है कि वे अपने वतन और वहाँ से जुड़ी यादों को भुला नहीं पाते ।

एक ओर लालवानी कराची में रह गए लोगों को याद करता है । विभाजन के कारण उसको कराची छोड़ना पड़ा । उसके भीतर अपने मित्रों की याद की तड़प है । कराची के अपने मित्रों को वह कमाल भाई के माध्यम से सलाम भेजता है-"मेरा सलाम ज़रूर बोलना रफीक टी स्टाल वाले को और अब्दुस्सतार को और मिस्टर लतीफ को कहना लालवानी बहुत याद करता है, तुम समझो ।" ।

दूसरी ओर कमाल भाई हैं, जो कभी-कभी पाकिस्तान से अपने घर गया आते हैं, किंतु वे विक्षाताक्षा वापस जाते है । उनका मन तो गया की हवा के लिए मचलता है । अपने शहर गया को वे भुला नहीं पाते और मृत्यु से पूर्व उनकी अंतिम इच्छा अपनी जन्म भूमि के प्रति उसके लगाव को प्रकट करती है।-"मुझे गया ले चलो अम्मा के पास । मैं कराची में रेगिस्तान में मरना नहीं चाहता । मुझे वहीं दफ्न करना । फल्गू नदी के उस पार कब्रिस्तान में जहाँ अब्बा की कब्र है और बड़े अब्बा की ।" 2

"मेरा वतन" के मि.पुरी अपने वतन को भुला नहीं पाते । वे बार-बार अमृतसर से लाहौर ट्रेन बदलकर जाते हैं । वहाँ वे पैदा हुए थे । लाहौर की प्रत्येक जगह उनकी जानी पहचानी तथा उनेक साथ सहज लगाव है । जब वे अपने मकान के सामने जाते हैं, जिस पर अब किसी और का कब्जा है, तब उन्हें मकान से जुड़ी अनेकों कहानियाँ

---

1. - वही - पृ. 68
2. - वही - पृ. 73

याद आती है-"सामने उसका अपना मकान आ गया है । उसके अपने दादा ने उसे बनाया था । उसके ऊपर के कमरे में उसके पिता का जन्म हुआ था । उसी कमरे में उसने आँखें खोली थीं और उसी कमरे में उसके बच्चों ने पहली बार प्रकाश-किरण का स्पर्श किया था । उस मकान के कण-कण में उसके जीवन का इतिहास अंकित था।"[1]

"परदेशी" कहानी का छाको सौकड़ों मील दूर ढाका में बैठा हुआ, अपने शहर में होने वाले धार्मिक उत्सव से कितनी निकटता महसूस करता है-"हमको बहुत दुःख हुआ इस बार मुहर्रम में तीन मेर बाजा था । हम रहते तो ऐसा नहीं होने देते । जैसे हमेशा, चंदा उठाकर अच्छा से अच्छा अखाड़ा निकालते ।"[2] छाको अपने प्रदेश में होने वाले धार्मिक उत्सव की सफलता के लिए कितना बेचैन है, जबकि वह पाकिस्तान की नागरिकता ले चुका है, फिर भी उसके भीतर उस जगह और धार्मिक उत्सव के प्रति अटूट लगाव बना हुआ है, जिसको भूल पाना उसकी कल्पना के बाहर है ।

"क्लेम" कहानी में साधुसिंह ने अपने घर के आँगन में एक आम का पेड़ लगाया था । फल आने की खुशी में उसने न जाने कितनी कच्ची अंबियाँ खा डाली थी । उसे याद आता है-"उसका मन उस समय उस आम के पेड़ की डालों के गिर्द मंडरा रहा था,जो उसने बड़े चाव से अपने पतोकी के घर के आँगन में लगाया था । नौ रुपये महीने के वह मकान बरसों के परिचय के कारण अपना ही लगता था।"[3] साधुसिंह का मकान अपना नहीं था फिर भी बरसों उसमें रहने के कारण उससे लगाव हो गया था । वहाँ उसने एक आम का पेड़ भी लगाया था । उस घर से जुड़ी यादों को वह भूल नहीं पाता है ।

----

1. विष्णु प्रभाकर-मेरा वतन-पृ. 11
2. सं.धरेंद्र मोहन:सिक्का बदल गया:पृ.14।
3. सं. अनीता राकेश:मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियाँ-पृ.111।

6. शरणार्थियों की त्रासदी:-

विभाजन होने पर दोनों देशों की सरकार की ओर से विस्थापितों के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाए गए । लोगों साम्प्रदायिक दंगे होने पर अपनी सम्पत्ति और मकान छोड़ छोड़कर केवल जान बचा कर भागे । जब मैजिस्ट्रेट से लेकर सिपाही तक साम्प्रदायिक हो जाएं, तो सुरक्षा की बात तो बहुत पीछे छूट जाती है । रास्ते में उन पर विधर्मियों ने हमले किये । लाखों लोग मारे गए । जो लोग उनके हमलों और अनेकों अत्याचारों से बचकर सीमा-पार आ सके, उनकी भी दशा कम सोचनीय नहीं थी । सीमा-पारी से आये शरणार्थियों के लिए सरकार की ओर से राहत-कार्यों में रही अनेकों कमियों ने उनकी कमर और तोड़ दी ।

शरणार्थियों की त्रासदी पर प्रकाश डालने वाली कुछ कहानियां ये हैं-""टेबल लैंड"(उपेंद्रनाथ अश्क);"नारंगियां"(अज्ञेय), "क्लेम"(मोहन राकेश) और "मुक्ति"(देवेंद्र इस्सर) ।

उपेंद्र नाथ अश्क की"टेबल लैंड" कहानी में शरणार्थियों की सहायता हेतु देश के बड़े-बड़े नेताओं ने लोगों से अपीलें की , किंतु ऐसे विपत्ति के समय में मोटे पेट वालों की बन आयी । उन्होंने अपना स्वार्थ सिद्ध किया मगर शरणार्थी के रूप में व्यक्ति अपने अस्तित्व की रक्षा, अनेकों विपत्तियों के आने पर भी करता रहा-"लेकिन मोटे पेट वाले इस दुगद परिस्थिति में भी अपने पेट को कुछ और बढ़ाने की फिक्र में हैं । इसलिए कीमतें आकाश को छू रही हैं ।...इंसान काफी ढीठ सिद्ध हुआ है । दुगद से दुगद परिस्थिति में वह जीने का मोह नहीं छोड़ता और

हम सब आज कल इसी दौड़ने का सबूत दे रहे हैं ।"[1]

शरणार्थियों ने अपनी स्थिति को जल्द से जल्द बेहतर बनाने के लिए कोई-न-कोई कारोबार शुरू कर दिया था और वे पुरुषार्थी कहलाने के अधिकारी हो गए थे । वे अपने कारोबार में धीरज और शान्ति से जुटे हुए थे । उन्होनें हौसला रखना सीख लिया था ।

अज्ञेय की कहानी "नारंगियां" में परसू का अपने भाई के प्रति यह कथन-"अरे तो हम मर तो नहीं गए हैं । साले, रिफ्यू जी बनकर आया है तो हौसला रखना सीख।"[2] उनके शरणार्थी जीवन में आये कष्टों को सहन करने की प्रेरणा देता है ।

जिन शरणार्थियों की सम्पत्ति पाकिस्तान में छूट गयी थी, उनके लिए सरकार की ओर से, उस सम्पत्ति के मुआवजे के रूप में रुपया दिया जा रहा था । मगर सरकार की ओर से यह कार्य बहुत धीमी गति से चल रहा था । लोग परेशानियां उठाकर दूर-दूर से क्लेम दफ्तर पहुंचते थे । अनेक चक्कर लगाने पर भी उन्हें अपनी सम्पत्ति का उचित मुआवजा नहीं मिला पाता था ।

मोहन राकेश कृत "क्लेम" कहानी में शरणार्थियों की परेशानी और सरकारी रवैये पर प्रकाश डाला गया है -

---

1. सं॰गिरिराज शरण अग्रवाल:साम्प्रदायिक सद्भाव की कहानियां - पृ॰ 44
2. अज्ञेय : ये तेरे प्रतिरूप - पृ॰ 28

"हमारा क़सूर यही है कि मियाँ - बीबी दोनों सलामत हैं । मैं अगर मर-खप गया होता, तो मेरे बच्चों को भी अब तक दो रोटियाँ नसीब हो जातीं । आँखें मेरी अंधी हो रही हैं, जोड़ दर्द करते हैं - मैं जीता हुआ भी क्या मुर्दों से बेहतर हूँ ? मगर सरकार के घर में ऐसा अंधेर है कि इन्सान की जरूरत को नहीं देखते ।... मेरे बच्चों के पास तो एक - एक फटी क़मीज भी नहीं है ।"1

देवेंद्र इस्सर की कहानी "मुक्ति" की लीलावंती विस्थापन से पूर्व सुखी जीवन व्यतीत कर रही थी । उसका पति डाक्टर था । उनकी एक जवान लड़की शीला और एक छोटा लड़का था । आजादी की रात शीला को गुंडे उठाकर ले गए । उनको वहाँ से भागना पड़ा । वहाँ से आने के बाद उनकी स्थिति यह हो गयी कि "देहली में आज दो रोज से वह भूखी थी । जिस मकान में वह रहती थी , उसमें हमेशा घुप अंधेरा रहता था । उसके पति के आते और दवाओं के बक्स सब वहीं रह गये थे और अब वह किसी कम्पनी का इंश्योरेंस एजेन्ट हो गया था । आमदनी इतना थोड़ी थी कि कई बार खाना भी न मिल सकता था ।" 2

लीलावंती उन लाखों विस्थापितों का प्रतिनिधित्व करती है, जिनको सीमा-पार आकर दयनीय स्थिति का

---

1. सं. अनीता राजेश: मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियाँ-पृ.110

2.

करना पड़ा । उनको देश - विभाजन से क्या हासिल हुआ ? उनकी इस दुर्दशा के लिए कौन जिम्मेदार है ? सरकार ने अपने कर्तव्य को निभाने के लिए कोई ठोस योजना नहीं बनायी थी , जिसके परिणाम स्वरूप लोगों को दर - दर की ठोकरें खानी पड़ी ।

वास्तविक और जीवंत घटनाओं पर आधारित इन कहानियों में विभाजन की निस्सारता को प्रतिपादित किया गया है । स्वतन्त्रता - प्राप्ति पर अनेक प्रश्न चिह्न लगाए गये हैं । जो लोग सैंकड़ों वर्षों से मिल - जुलकर रहते आये थे, उनको एक - दूसरे से बिछुड़ना पड़ा । लोगों को अपने पड़ौसियों, मित्रों और जन्म भूमि की याद एक कसक के रूप में जीवन भर सालती रही । इन कहानियों में उस ऐतिहासिक और सांस्कृतिक हादसे से उत्पन्न होने वाली आंतरिक और बाह्य समस्याओं को मानवीय धरातल पर कलात्मक - रचनात्मक रूप प्रदान किया गया है । ये कहानियां मनुष्य स्वभाव की परुषता - वृत्ति और उसकी धर्मांधता पर कठोर व्यंग्य करती हैं ।

चौथा अध्याय

कहानियों का शिल्प - विधान

-कहानियों का शिल्प-विधान-

1. कहानी शैली :-

देश विभाजन से सम्बन्धित अनेक कहानियाँ वर्णनात्मक शैली में लिखी गई हैं। " इस शैली में कहानीकार स्वयं या किसी "अन्य पुरुष" (वह) के द्वारा सम्पूर्ण कहानी कहता है। इस विधि में, कहानीकार जीवन के किसी भी क्षेत्र का वर्णन विवरणात्मक ढंग से करता है। सूक्ष्म विश्लेषण और अन्तर्मन का अन्वीक्षण इस विधि में अधिक सम्भव नहीं। बौद्धिक विवेचन भी यदि कहीं आते हैं तो वे प्रखर और गहन न होकर, बाह्य वर्णन तक ही सीमित होते हैं।" 1

विष्णु प्रभाकर की कहानी "मेरा वतन" में मिस्टर पुरी के भेष और मन के साथ-साथ उसकी चाल का वर्णन जो कि लाहौर के बदले हुए माहौल को देखकर उससे प्रभावित होती है, लेखक ने इस प्रकार वर्णन किया है-" उसने सदा की भाँति तहमद लगा लियाथा और फैज ओढ़ ली थी। उसका मन कभी-कभी साइकिल के ब्रेक की तरह से झटका देता था परन्तु पैर यंत्रवत् आगे बढ़ते चले जाते थे। यद्यपि इस शक्ति-प्रयोग के कारण वह बेतरह काँप उठता था, पर उसकी गति पर अंकुश नहीं लगता था।" 2

कृष्णा सोबती की कहानी "मेरी माँ कहा" भी वर्णनात्मक शैली में मिलती है, इसमें यूनस खाँ अपनी ड्यूटी पर पैट्रोल कर रहा है। लाहौर में हुए दंगों, आगजनी और मारकाट को उसने देखा है। अब वह उसी वीरान लाहौर का दृश्य देख रहा है"लाहौर की बड़ी-बड़ी सड़कों पर। कहीं-कहीं रात की लगी हुई आग से धुआँ निकल रहाहै। कभी-कभी

----

1. मीरा सीकरी : नयी कहानी - पृ. 103

2. विष्णु प्रभाकर: मेरा वतन - पृ. 09

डरे हुए, सहमे हुए लोगों की टोलियां कुछ फौजियों के साथ नजर आती हैं । कहीं उसके अपने साथी शोहदों के टोलों को इशारा कर हंस रहे हैं । कहीं कूड़ा - करकट की तरह आदमियों की लाशें पड़ी हैं । कहीं उजाड़ पड़ी सड़कों पर नंगी औरतें, बीच-बीच में नारे-नारे और चीखें ।" ।

भीष्म साहनी की कहानी "अमृतसर आ गया है" में हिंदू बाबू के अन्तर्मन में कहीं परिवर्तन हो रहा है । इसका आभास कहानीकार द्वारा किए गए हिंदू बाबू के हाव भाव के वर्णन से होता है -"थोड़ी देर तक वह मुंह डोलता रहा, फिर उसने घूमकर दरवाजा बंद कर दिया । उसने ध्यान से अपने कपड़ों की ओर देखा, फिर अपने दोनों हाथों की ओर देखा, फिर एक-एक करके अपने दोनों हाथों को नाक के पास ले जाकर उन्हें सूंघा , मानों जानना चाहता हो कि उसके हाथों से खून की बू तो नहीं आ रही है । फिर वह दबे पांव चलता हुआआया और मेरी बगल वाली सीट पर बैठ गया ।"[2]

देवेंद्र इस्सर की कहानी "मुक्ति" में "लीलावंती ने उकताकर सामने वाली दुकान में सजे हुए कपड़े के थानों की तरफ देखना शुरू कर दिया । रंग-रंग के नाना प्रकार के डिजाइनों के कपड़े उसकी निगाहों को चौंधिया रहे थे । नीले, पीले और लाल रंग कपड़ों से उड़कर हवा में तैरने लगे । लीलावंती को ऐसे महसूस हुआ है जैसे उसकी निगाहों के सामने शोले नाच रहे थे । उसको बच्चे - बच्चे प्रिंट के कपड़े पहनने का बहुत शौक था । नीले , साटन की सलवार और प्रिंट की कमीज पर सफेद नून का दुपट्टा उसे कितना भला लगता था, लेकिन अब उसके पास नीले साटन की सलवार न थी, प्रिंट की कमीज न थी, नून का सफेद दुपट्टा न था । उसके पास मोटे खद्दर के तीन खुरदरे कपड़े थे,

---

1. नरेंद्र मोहन: भारत-विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां=पृ. 58
2. - वही - पृ. 89

जिन्हें वह पहने हुए थी ।" ।

उपरोक्त वर्णन में लीलावती के कपड़ोंके प्रति शौक़ का ही वर्णन मात्र नहीं है, अपितु विस्थापन की प्रक्रिया से उपजी उनकी दुर्दशा का भी सांकेतिक परोक्ष रूप से कर दिया गया है ।

पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र" ने "ईश्वरद्रोही" कहानी में एक भिखारिन की दशा और प्रात: काल में मछुआ बाजार की एक गली का वर्णन इस प्रकार किया है-"कलकत्ता के मछुआ बाजार की एक गली में एक भिखारिन चली जा रही थी । उसने तन पर गंदा और कई स्थानों पर बुरी तरह से फटा हुआ पुराना चूड़ीदार पायजामा औरउसी तरह का एक कुरता था । माथे पर चद्दर के स्थान पर दो हाथ लम्बा और हाथ-भर चौड़ा कपड़ा - कपड़ा क्या चीथड़ा था । प्रात: नौ-दस बजे का समय था । व्यापारजीवी जन अपने-अपने धंधे की धुन में इधर से उधर और उधर-सेइधर आ-जाकर गली के शान्त हृदय पर अशान्ति का सिक्का बैठा रहे थे ।" 2

अनेक कहानियों में किए गए वर्णन तो पूर्णत: यथार्थ और ऐतिहासिक तथ्यों के निकट हैं । उपेंद्र नाथ अश्क और श्रवण कुमार की कहानियों में ये वर्णन देखे जा सकते हैं ।

"लाहौर जल रहाहै । मुहल्ला सिरीन, कटड़ा पूरबियां, भाटी और दिल्ली दरवाजे के अन्दर हिंदुओं के मकान शाहआलमी की आग में सौं से अधिक मकान जल गए । आग, रात के अढ़ाई बजे-ऐन कर्फ्यू के समय लगाई गई । जो बुझाने आया, वह पुलिस की गोली का शिकार बना ।..अकबरी मण्डी-लाहौर की सबसे बड़ी गेहूं की मार्केट-पहले ही जल चुकी है ।" 3

---

1. सं.नरेंद्र मोहन:सिक्का बदल गया:पृ. ।।।
2. पाण्डेय बेचन शर्मा"उग्र" :ऐसी होली खेलो लाल-पृ.4।
3. सं.गिरिराज शरण अग्रवाल:सांप्रदायिक सद्भाव की कहानियां-पृ.43

"मैजिस्ट्रेट से लेकर मामूली सिपाही तक फिरकापरस्त हो गए हैं ।" ।

"कुँवारी लड़कियों के साथ बलात्कार किया गया । उनको नंगा करके उनकी छातियों पर पाकिस्तान जिंदाबाद लिखकर उनका जुलूस निकाला गया । बूढ़ी-बुढ़ियों की छातियां काटी गईं । मां-बाप के सामने उनकी बच्चियों के साथ मुंह काला किया गया, बच्चों के सामने उनके माता-पिता की गर्दनें काटी गईं ।" [2]

"उन्होंने बताया कि उनकी गाड़ी से पहले जो गाड़ी रवाना हुई थी, उसी रोककर उसके एक-एक आदमी को चुन-चुनकर काटा गया और फिर लाशों से भरी और खून से लथपथ गाड़ी को "हिंदुस्तान" के लोगों को भेंट स्वरूप भेजा गया ।" [3]

---

1. - वही - पृ. 43 (मैजिस्ट्रेट और पुलिस अयोग्य और पक्षपाती रहे हैं, और पुलिस ने आगजनी, हत्या, लुटपाट की तरफ से आंखें ही नहीं मूंदी बल्कि उसमें हिस्सा भी लिया है। डौमिनीक लापियर तथा लैरी कालिन्स: माउंटबेटन और भारत का विभाजन पृ. 119

2. - वही - पृ. 52 (उसी दिन सुबह अमृतसर के बाजार में सिखों ने मुसलमान लड़कियों और औरतों के बड़े समूह को घेर लिया, उनको नंगा कर दिया और चारों ओर से शोर मचाती हुई भीड़ के सामने चक्कर लगवाया । फिर जो अच्छी और जवान थीं उन्हें खींचकर उनके साथ लगातार बलात्कार किया गया और बाकियों को कृपाण से कत्ल कर दिया गया ।..बच्चों की टांग पकड़कर दीवारों पर पटक दिया गया, लड़कियों के साथ बलात्कार हुआ और उनकी छातियां काट ली गईं।गर्भवति औरतों के पेट चीर दिए गए ।" लिओनार्ड मोसले: भारत में ब्रिटिश राज्य के अंतिम दिन: पृ. 198)

3. सं. नरेंद्र मोहन: भारत-विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां, पृ-132 ("इस समय लाशों से भरी गाड़ियां लाहौर आतीं और उन पर ...

इन वर्णनात्मक कहानियों में केवल कथात्मक स्थूल वर्णन ही नहीं है, अपितु इनमें गूढ़ चिंतन, आंतरिक विश्लेषण और नाटकीय रोचकता भी विद्यमान है ।

कई कहानियाँ आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई है । एक लेखिका के अनुसार आत्मकथा अथवा आत्मचरित शैली , जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, उत्तम पुरुष में कही जाती है । इस विधि में स्वयं कहानीकार या कहानी के किसी पात्र(जो भोक्ता भी है) अर्थात "मैं" के माध्यम से सारी कहानी प्रस्तुत की जाती है । इस विधि में वाचक जो भोक्ता भी है, कई स्थों में सामने आता है ।[1]

इस शैली में लिखी गयी प्रमुख कहानियाँ हैं-"अमृतसर आ गया है" (भीष्म साहनी),"पानी और पुल"(महीप सिंह) और"लेटर बाक्स" (अज्ञेय) । "अमृतसर आ गया है" कहानी का यह अंश देखिये :-

"उन्हीं दिनों पाकिस्तान के बनाए जाने का ऐलान किया गया था और लोग तरह-तरह के अनुमान लगाने लगे थे कि भविष्य में जीवन की रूपरेखा कैसी होगी । पर किसी की भी कल्पना बहुत दूर तक नहीं जा पाती थी । मेरे सामने बैठे सरदार जी बार-बार मुझसे पूछ रहे थे कि पाकिस्तान बन जाने पर जिन्ना साहिब बंबई में ही रहेंगे या पाकिस्तान में जाकर बस जाएंगे, और मेरा हरबार यही जवाब होता"बंबई क्यों छोड़ेंगे, पाकिस्तान में आते-जाते रहेंगे, बंबई छोड़ देने में क्या तुक है ।" [2]

लिखा होता - भारत की ओर से उपहार । इसी तरह सिखों से भरी गाड़ी को कत्ल करके उस पर लिख दिया गया-पाकिस्तान की ओर से उपहार।"लिओनार्ड:भारत में ब्रिटिश राज्य के अंतिम दिन, पृ॰ 198

1॰ मीरा सीकरी: नई कहानी - पृ॰ 104-105

2॰ सं॰नरेंद्र मोहन:भारत-विभाजन:हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां-पृ॰76

उपरोक्त कहानी में कहानीकार प्रधान पात्र नहीं है और कहानी की सम्पूर्ण घटनाओं से असम्पृक्त होकर केवल उनका साक्षी मात्र है ।

"पानी और पुल" तथा "लेटर बाक्स" कहानियों में कहानीकार ने व्यक्ति और परिवेश से तादात्म्य स्थापित कर आत्मचरित के रूप में कहानी कही है, जिससे आत्मीयता का होना तो स्वाभाविक ही है, साथ ही वे स्वयं कहानी में एक पात्र के रूप में पाठक के मन में विश्वसनीयता के भाव को भी पैदा करते हैं । "पानी और पुल" कहानी का यह उद्धरण अवलोकनीय है: -"गाड़ी ने लाहौर का स्टेशन छोड़ा तो एक बारगी मेरा मन काँप उठा । अब हम लोग उस ओर जा रहे थे, जहाँ चौदह साल पहले आग लगी थी । जिसमें लाशों जल गए थे, और लाशों पर जलने के निशान आज तक बने हुए थे । मुझे लगा, हमारी गाड़ी किसी गहरी, लम्बी अंधकारमय गुफा में घुस रही है । और हम अपना सब कुछ इस अंधकार को सौंप दे रहे हैं ।"[1]

"लेटर बाक्स" कहानी में भी आत्मकथात्मक शैली का यह उद्धरण देखिये: -"उसने पोस्टकार्ड फिर मेरे हाथ से ले लिया । मैंने मेहनत से उसे सीधा किया था, उसने फिर उसे कसकर पकड़ा और पहले सा मरोड़ लिया । मैं धीरे-धीरे वहाँ से हटकर चलने लगा । चलते-चलते मैंने देखा, उसके चेहरे के आँसू सूख गए हैं और वहाँ धैर्य का सीमाहीन धैर्य का भाव उसके चेहरे पर लौट आया है कि शायद अब मेरे बाद जो चिट्ठी छोड़ने आए वह मुझसे अधिक जानता हो और उसे बता दे कि वह अपनी चिट्ठी किस पते पर छोड़े ताकि वह बाबूजी को मिल जाये।"[2]

कुछ कहानियों में पूर्वदीप्ति शैली के दर्शन होते हैं । इस शैली में कहानीकार स्वयं या कहानी का प्रमुख पात्र विगत घटनाओं को याद करता हुआ कहानी कहता है । बदीउज्जमाँ की कहानी "अंतिम इच्छा" का ख्वाजा, कमाल भाई की मृत्यु का समाचार मिलने पर अपने बचपन

---

1. - वही - पृ. 90
2. अज्ञेय : ये तेरे प्रतिरूप : पृ. 59

की बातें याद करता है जब कि वह कमाल भाई से मार खाया करता था "कमाल भाई मुझसे चार-पाँच साल ही तो बड़े थे । बचपन में उनसे मैं बहुत डरता था । क्या मजाल जो उनके हुक्म के खिलाफ कुछ कर सकूँ । लेकिन भीतर ही भीतर जलता भी कम नहीं था । बड़ी ईर्ष्या होती थी उन्हें देखकर । गोरा-चिट्टा रंग, बड़ी-बड़ी आँखें, लम्बा-चौड़ा शरीर । बड़ी ही भव्य और आकर्षक व्यक्तित्व था उनका । उनके सामने मैं तो बिलकुल मरियल दिखाई देता था । आए दिन वह मुझे पीटते रहते थे । बड़ा क्रोध आता था मुझे । लेकिन उनपर कोई वश नहीं चलता था मेरा ।" ।

अज्ञेय की "रमंते तत्र देवता" कहानी अक्तूबर सन् 1946 के दंगाग्रस्त कलकत्ता की याद करते हुए कही गयी है " मैं तब बालीगंज की तरफ रहता था । यहाँ शांति थी और शायद ही कभी दंगा होती थी । यों खबरें सब यहाँ मिल जाती थीं, और कभी-कभी आमामी "प्रोग्रामों" का कुछ पूर्वाभास भी । मंत्रणाएँ यहाँ होती थी, शरणार्थी यहाँ आते थे । सहानुभूति के इच्छुक आकर अपनी गाथाएँ सुनाकर चले जाते थे ...।" [2]

"परदेसी" बदीउज्जमां की कहानी का नाजे बाबू अपने बचपन के दिनों के मित्र छाकों की पाकिस्तान (ढाका) से चिट्ठी आने और वहीं की नागरिकता प्राप्त करने का पता चलने पर वह उसकी मुहर्रम के दिनों की छवि याद करता है-"उस रोज मुहर्रम की सातवीं तारीख थी । दाहा पर डंके के बजने की आवाज आ रही थी । गली में लड़के हरे और चमकदार नारा -बद्धी पहने आ जा रहे थे । सचमुच छाकों पैक बनकर किस तरह फुदकता फिरता था । सफेद चूड़ीदार पायजामें

---

1. सं. नरेंद्र मोहन: भारत-विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ पृ.64
2. अज्ञेय : ये तेरे प्रतिरूप: पृ. 66

पर हरा कुरता । कमरबंद बांधे हुए, जिसमें तीन-चार घंटियां और म
घुंघरू लटकती रहतीं । चार दाहा एक किए रहता था वह । रात
भर उसकी घंटियों की आवाज गली में गूंजती रहती । अखाड़ा
निकलता , तो उसके साथ-साथ जाता और दिन के नौ-दस बजे
कहीं वापस आता ।" ।

"अंतिम इच्छा" और "परदेसी" (बदीउज्जमा) पूर्वदीप्ति शैली में लिखी होने पर भी आज की स्थितियों से टकराती हुई मानवीय करुणा को उभारती है ।

श्रवण कुमार की कहानी "मामूली लोग" भी विभाजन से उपजी अमानवीयता की यादों के सिलसिले में लिखी गयी है। "जाने किस बात के सिलसिले में मुझे वे सब बातें एकाएक याद आने लगीं । वह गली-मुहल्ले, वही पड़ोसी , वही लोग । फिर लाशें ही लाशें । एक लाश मैंने एक सुबह उस खेत में देखी । बिल्कुल नंगी । गोरी - चिट्टी । मुझे दूर से ही दिख रही थी । किसी औरत की थी । ऐसे फूल रही थी जैसे उसमें हवा भर दी गई हो । ऐसे ही एक सुबह मैंने कुछ लाशें शुगर मिल के पास देखीं । कुछ तड़प रही थीं , कुछ बिल्कुल मुर्दा थीं ।"2

कुछ कहानियां प्रतीकात्मक शैली में मिलती है । मीरा सीकरी के अनुसार "बात को अधिक संगत और उपयुक्त ढंग से कहने की अभिरुचि ही विविध शैलियों को जन्म देती है । प्रतीक का आधार ही बुद्धि है । वैसे तो सम्पूर्ण भाषा ही हमारी भावनाओं की प्रतीक है किंतु अपने संकुचित अर्थ में प्रतीक से अभिप्राय: है-जहां अभिधेय अर्थ के अतिरिक्त किसी अन्य अदृश्य अर्थ (जो वास्तविक

1· सं· नरेंद्र मोहन: सिक्का बदल गया पृ· 140

2· सं· नरेंद्र मोहन: भारत विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां-124

अर्थ होता है) की योजना रहती है ।"[1]

मोहन राकेश की कहानी "मलबे का मालिक" में प्रतीकों का प्रयोग अर्थ को अधिक ग्राह्य बनाने के लिए ही किया गया है न कि जटिल बनाने के लिए । इसके लिए कहानीकार ने स्वच्छंद प्रतीकों की नियोजना की है ।

"जले हुए किवाड़ का वह चौखट मलबे में से सिर निकाले साढ़े सात साल खड़ा तो रहा था, पर उसकी लकड़ी बुरी तरह भुर भुरा गयी थी । गनी के सिर के छूने से उसके कई रेशे झड़कर आस-पास बिखर गए । कुछ रेशे गनी की टोपी और बालों पर आ रहे । उन रेशों के साथ एक केंचुआ भी नीचे गिरा जो गनी के पैर से छः आठ इंच दूर नाली के साथ-साथ बनी ईंटों की पटरी पर इधर-उधर सरसराने लगा । वह छिपने के लिए सुराख ढूंढता हुआ जरा सा सिर उठाता , पर कोई जगह न पाकर दो-एक बार सिर पटकने के बाद दूसरी तरफ मुड़ गया ।"[2]

केंचुआ उस दौर के विभीषिकाग्रस्त व्यक्ति का प्रतीक है, जिसे विभाजन की विभीषिका से मिले मलबे को छोड़कर, अपनी जिजीविषा के बलबूते पर अपने लिये नयी इमारत बनानी होगी । व्यक्ति (केंचुआ) अपने लिए नया रास्ता तलाश कर रहा है । नयी इमारत बना रहा है । इसी कहानी का यह अंश भी देखिये:-

"एक भटका हुआ कौआ न जाने कहाँ से उड़कर उस चौखट पर आ बैठा । इससे लकड़ी के कई रेशे इधर-उधर छितर गए । कौए के वहाँ बैठते न बैठते मलबे के एक कोने में लेटा हुआ कुत्ता गुर्रा कर उठा और जोर-जोर से भौंकने लगा-वऊ-वऊ-वऊ । कौआ कुछ देर सहमा सा चौखट पर बैठा रहा, फिर पंख फड़फड़ाता कुएं के पोपल

---

1. मीरा सीकरी: नई कहानी पृ. 113-114
2. सं.अनीता राकेश: मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियाँ -पृ.227

पर चला गया । कौए के उड़ जाने पर कुत्ता और नीचे उतर आया और पहलवान की तरफ मुँह करके भौंकने लगा । पहलवान उसे हटाने के लिए भारी आवाज में बोला, "दुर् दुर् दुर्...दुर्र।" मगर कुत्ता और पास आकर भौंकने लगा । -वऊ-अऊ-वउ-वउ-वउ-वउ...।" [1]

यहाँ कुत्ता (पशु) मनुष्य की पाशविकता का प्रतीक है । मानव की पाशविक वृतियों द्वारा हुए विनाश (मलबा का स्वामी तो पशु (कुत्ता) ही हो सकता है ।

"मलबा" अपने में एक प्रतीक है, किंतु यह प्रतीक कहानी पर आरोपित नहीं, कहानी के यथार्थ परिवेश में से ही उभरता है । ईंट चूने, मिट्टी का मलबा, मानवीय मूल्यों के विघटन को अभिव्यक्त करने में पूर्णत: समर्थ है । [2]

TH-3316

2. भाषा: -

विभाजन की दुर्घटना का प्रभाव-क्षेत्र पश्चिमी पंजाब और बंगाल था, जबकि व्यापक रूप से दुर्घटनाएं पश्चिमी पंजाब में ही घटित हुई । विभाजन की दुर्घटना पर हिंदी में कहानी लिखने वाले अधिकतर कहानीकार इसी क्षेत्र से संबंधित हैं । इसलिए उनकी कहानियों में उसी परिवेश के निर्माण के लिए सजीव भाषा का प्रयोग हुआ है ।

इन कहानियों में कहानी सुलभ भाषा का इस्तेमाल किया गया है । आलंकारिता और प्रतीकात्मकता का आतंक इनमें नहीं है । जन - सामान्य की भाषा में कहानियाँ कही गयी हैं । उस परिवेश

---

1. - वही - पृ. 23।
2. मीरा सीकरी: नई कहानी - पृ. 23।

और उन लोगों या पात्रों की मानसिकता के निकट कौन-से शब्द हो सकते हैं, उसके अनुसार ही इन कहानियों में शब्दों का चुनाव करके गढ़ी बोली को एक विशेष रंग दिया गया है ।

उर्दू और पंजाबी के शब्दों और वाक्यों का प्रयोग पात्रों और परिवेश के अनुकूल होने से अखरता नहीं है । ये सरल और प्रचलित शब्द कहानी के असर और वातावरण के निर्माण में सहायक सिद्ध हुए हैं । इन कहानियों में आए उर्दू और पंजाबी के शब्दों और वाक्यों के उदाहरण प्रस्तुत हैं: -

उर्दू: -

"मगर उसके साथ ही साथ पूरे वक्त जैसे कोई भीतर बैठा एक बड़ी तकलीफदेह कड़ी गुनगुनाता रहता है ।"1

"इन मासूम बच्चों की इन कुरबानियों का आजादी के खून से क्या ताल्लुक ।"2

"तमाम शिकवे-शिकायतें और उतार-चढ़ाव के बावजूद अम्मा और छोटी अम्मा के संबंधों में कभी ऐसी दरार नहीं पड़ी कि दोनों एक-दूसरे से बिलकुल अलग हो जाए ।"3

"हम पड़ौसी की हिफाजत न कर सके तो मुल्क की हिफाजत क्या खाक करेंगे ।"4

इतना गुमान ठीक नहीं है, बहिन हम भी तो मुसलमान हैं।"5

"हमदर्दी बड़ी चीज है, मैं अपने को निहाल समझता अगर आप हमदर्दी देने के काबिल होते ।"6

---

1. सं. नरेन्द्र मोहन: भारत विभाजन/हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ-पृ. 23
2. - वही - पृ. 57
3. - वही - पृ. 68
4. अज्ञेय : ये तेरे प्रतिरूप पृ. 42
5. - वही - पृ. 63
6. - वही - पृ. 79

"मुसीबत जदा है, जनाब। अमृतसर में रहता था।"[1]

"या अल्लाह, कैसी कयामत आ गयी।"[2]

"कितनी ख्वाहिश होती थी, मुझे अखाड़े के साथ शहर-भर में घूमने की, लेकिन अब्बाजान कहाँ इजाजत देते थे इसकी।"[3]

"सब में भाई-भाई की-सी मुहब्बत थी।"[4]

पंजाबी:-

"ऐ मर गयी एं-रब्ब तेनू मौत दे-"

"ऐ आयी आं- क्यों छावेले (सुबह-सुबह) तड़पना एं?"[5]

"शाहनी, रब्ब नू रही मंजूर सी।"[6]

"तेनू भाग जगण वन्ना।"[7]

"वे पुत्तरो, मैंनू अन्नी नू कि वास्ते ज्यूंदा छड्डिया ए। वे पुत्तरों मेरी वी कोई गरदन लाह दयो।"[8]

"सुट्ट ओ करतार सिंहा, मशीन नू बाहर। गरीब शरणार्थी हण। असाँ इह मशीन सालो की करनी ए।"[9]

"भरजाई, तेरे बच्चे कैसे हैं?"

"वाहे गुरूजी की किरपा है, सब अच्छे हैं।"[10]

----

1. विष्णु प्रभाकर : मेरा वतन पृ. 10
2. यशपाल: सच बोलने की भूल - पृ. 101
3. सं.नरेंद्र मोहन-भारत विभाजन:हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ-पृ.140
4. सं.अनीता राकेश:मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियाँ -पृ.229
5. सं.नरेंद्र मोहन:सिक्का बदल गया-पृ.[illegible]
6. - वही - पृ.[illegible]
7. - वही - पृ.[illegible]
8. - सं. नरेंद्र मोहन-भारत विभाजन:हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ-124
9. - वही - पृ. 32
10. - वही - पृ. 95

"कि तुसी पंजाबी ओ ?"

"जी असी बे-नसीब जलंधर दे रहन वाले आँ ।"[1]

"चुप रह, सूर देया तुख्मा (सूअर के बीज) बड़ा देसैंगा बनता है ।"[2]

"आओ बैठो, बड़ी किरपा कीजी ।"

"अज जी बड़ा दुखी हो गया ए ?"[3]

लगभग सभी कहानियों में कथन की भाषा का इस्तेमाल किया गया है । बातचीत करने की प्रक्रिया में ऐसे लगता है कि पात्र कथन कर रहे हैं ।

पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र" ने तत्सम प्रधान भाषा को अपनाया है । कहीं-कहीं उनकी भाषा शैली में काव्यात्मकता आ गई है । उदाहरण के लिए-

"अपने पति रूपी दिग्दर्शक-यंत्र के अनायास खो जाने से मेरा मन:पोत भ्रम में पड़ गया ।"[4]

"चैत्र की उज्जवल चंद्र - करोज्वला निशा, जिसके प्रत्येक क्षण में वासना भरी मादकता मिली रहती है, मेरी देवरानियों की छत पर अमृत बरसा जाती थी और मेरी एकांत अंधेरी कोठरी में शोक का समुद्र लहरा जाती थी ।"[5]

"उसका चम्पक-वर्ण शरीर देखने से मालूम पड़ता था मानों सौंदर्य फटा पड़ता है ।"[6]

----

1. सं. गिरिराज शरण अग्रवाल: साम्प्रदायिक सद्भाव की कहानियाँ-52
2. यशपाल: सच बोलने की भूल. पृ. 98
3. अज्ञेय : ये तेरे प्रतिरूप - पृ. 67
4. पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र": ऐसी होली खेलो लाल-पृ. 28
5. - वही - पृ. 29
6. - वही - पृ. 43

कृष्णा सोबती की कहानियों में शब्दों की पुनरावृति द्वारा भाव पर बल देने और प्रभाव को गहराने की प्रवृत्ति अधिक है उदाहरण के लिए -

"दूर-दूर तक बिछी रेत आज न जाने क्यों खामोश लगती थी।"[1]

" और आज ....आज शाहनी नहीं ।" [2]

" फिर भी...फिर भी कुछ बंधा-बंधा सा लग रहा था।" [3]

"ठीक है देर हो रही है ।- देर हो रही है ।"[4]

"मगर-मगर दिन बदले , वक्त बदले ।"[5]

"नीचे, नीचे , शायद बहुत नीचे...जहाँ की खाई इंसान के खून से भर गई थी । "[6]

" रात-रात भर जलकर सुबह खाक हो गए मुहल्ले में जले लोथ देखे हैं ।" [7]

"बीच-बीच में नारे - नारे और ऊँचे ।"[8]

मोहन राकेश ने ध्वन्यात्मक परिवेश की पहचान के लिए शब्दों के स्थान ध्वनियों का प्रयोग किया है :

---

1. सं, नरेंद्र मोहन: सिक्का बदल गया - पृ. 86
2. - वही - पृ.86
3. - वही - पृ.86
4. - वही - पृ. 90
5. - वही - पृ.90
6. सं.नरेंद्र मोहन: भारत विभाजन/हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ -55
7. - वही - पृ. 55
8. - वही - पृ. 58

"चिचिचि··चिचि··हिववशु··च्यु-यु-यु-यु-यु-··चिचिचि···चिचि···।"¹

इस उदाहरण में विरान सड़क के आस-पास के पेड़ों में बैठी चिड़ियाँ ध्वन्यात्मक वातावरण पैदा कर रही है ।

"च्यु-च्यु-च्यु···चिक्-चिक्-चिक्···किर्र्र्र्र्-र्र्र्र्-रीरी-रीरी-चिर्र्र्र्र्।" 2

इस उदाहरण में रात की खामोशी में सुनाई देने वाली झिंगरों की आवाज वातावरण के वीरानेपन को गहराती हैं ।

अज्ञेय की भाषा में परिवेश-निमार्ण की अद्भुत क्षमता है-" "विषाक्त वातावरण, द्वेष और घृणा की चाबुक से तड़पड़ाते हुए हिंसा के घोड़, विष फैलाने को सम्प्रदायों के अपने संगठन और उसे भड़काने को पुलिस और नौकरशाही ।"3

बदीउज्जमाँ की कहानियों की भाषा एक ऐसी आदर्श भाषा है , जो उर्दू और हिंदी की भिन्नता को मिटाती है । उसमें न तो अरबी-फारसीपन है और न ही संस्कृतनिष्ठता । उदाहरण के लिए-"जितनी दिक्कत कचहरी के कागजात पढ़ने में होती है , उससे कम दिक्कत मुझे छाकों का खत पढ़ने में न होती । शुरू-शुरू में तो बहुत ज्यादा दिक्कत होती थी, पर अब इस लिखावट से कुछ परिचित हो चला था । दो-चार लफ्ज न भी पढ़ पाता, तो अंदाज से मतलब भाँप लेता था और मेरा अंदाजा हमेशा सही साबित होता, क्योंकि जनवा सिर हिला-हिलाकर मेरे अंदाज को तसदीक कर

1· सं·अनीता राकेश:मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियाँ -पृ·111

2· - वही - पृ· 23।

3· अज्ञेय : मै तेरे प्रतिरूप - पृ· 45

देती थी ।"[1]

"पात्रों के संवादों में उनकी स्थिति के अनुसार भाषिक परिवर्तन होता रहता है । कभी-कभी आंचलिक भाषा का उपयोग भी बदीउज्जमां कर लेते हैं ।"[2] उदाहरणार्थ-"हाए। कैसा गोरा लगा दीहिसई पाकिस्तान हमरे द्वार मो, छीन लीहिस मेरे लाल को ।" [3]

3. व्यंग्यात्मकता :

भारत-विभाजन पर लिखी गई कहानियों में धर्म, अमानवियता, राजनीतिक सरकार और सामाजिक कुरीतियों पर मार्मिक व्यंग्य किए गए हैं । कुछ उदाहरण लीजिये ।"कितने पाकिस्तान" शीर्षक कहानी का यह अंश देखिये :-

"लेकिन बन्नो, भिवण्डी में भी दंगा हो गया । मेरी-तुम्हारी वजह से नहीं-उसी एहसास की कमी की वजह से । सुना तो मैं सन्न रहा गया । पता नहीं अब क्या हुआ होगा? पांच बरस पहले तो मैं वजह हो सकता था, पर अब तो मैं वहां नहीं थी । "[4]

इस कहानी में पहले दंगे की संभावना का कारण मंगल का बन्नों से प्रेम करना हो सकता था । अब जब कि मंगल बन्नों से मीलों दूर है फिर दंगे की वजह क्या है ? दंगा क्यों हुआ?

---

1. सं.नरेंद्र मोहन:सिक्का बदल गया -पृ. 131

2. समकालीन भारतीय साहित्य:अंक-28,अप्रैल-जून-1987,पृ.194

3. सं. नरेंद्र मोहन-भारत-विभाजन:हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां-62

4. सं. नरेंद्र मोहन-भारत-विभाजन:हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां-42

कहा जा सकता है कि दंगे के लिए कारण ढूंढने की आवश्यकता नहीं है । वह तो लोगों की धर्मान्धता की वजह से छोटी-छोटी बात पर भी हो सकता है । मंगल के यह कहने पर कि अब तो मैं वहां नहीं था । पंक्ति में व्यंग्य झलकती है ।

एक अन्य कहानी "मामूली लोग का यह अवतरण भी अवलोकनीय है । "लेकिन बुड्ढी का बेड़ा पार लगाने को कोई तैयार नहीं था उससे किसी को कुछ नहीं लेना देना था ।"¹

यहां धर्म के नाम पर उभर आयी लोगों की अमानवीय हिंसक-प्रवृति पर व्यंग्य किया गया है । मजहब के नाम पर एक-दूसरे ने कुंवारी और जवान लड़कियों के साथ बलात्कार किया तथा उनको हांक कर ले गए । किंतु बुड्ढी से किसी का कोई सरोकार नहीं है । उससे किसी को कुछ लेना देना नहीं है ।

एक कहानी "ईश्वर द्रोही" का यह अंश लें:-

"उस दिन मुसलमान कहां थे, जब भिखारिन भूखों मर रही थी ? उस दिन दीन इस्लाम कहां था, जब अपने को मुसलमान कहने वाले कुत्ते उसके पाक दामन को गंदा करने पर उतारू थे ? अरे यारो ! कुफ्र, शैतानी, बदमाशी और लड़ाई का नाम दीन इस्लाम नहीं है । काहे को खुदा और मजहब को बदनाम करने पर कमर करते हो ? "2

इन पंक्तियों में "उग्र" ने धर्म की खिदमत करने वाले उन बदमाश लोगों पर व्यंग्य किया है, जो इंसानियत के धर्म

----

1. - वही - पृ. 124

2. पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र": ऐसी होली खेलो लाल-पृ.50

को भुलाकर दिखावटी धर्म की खिदमत के नाम पर खुदा और मजहब को बदनाम करते हैं ।

यशपाल की कहानी "कानून" से यह उदाहरण देखें:-

"... मैजिस्ट्रेट साहब की कलम रूक गई उन्हें सफाई माकूल जान पड़ी, लेकिन घर में आग लग जाने की हालत में बिना पास लिए कर्फ्यू में निकलने की गुंजाइश कानून में है या नहीं, इस मामले में कोई नजीर अदालत को याद न थी ।"[1]

यशपाल ने इन पंक्तियों, में सरकार द्वारा कर्फ्यू के दौरान लागू कठोर कानून पर व्यंग्य किया है । ऐसे कठोर कानून से क्या हासिल हो सकता है कि किसी के घर में आग लगे और वह घर से बाहर निकलते ही, कर्फ्यू का वास्ता देकर गिरफ्तार कर लिया जाए ।

मोहन राकेश की कहानी "क्लेम" का यह संवाद देखिये:

"नाम, साधुसिंह ।

वल्द, मिलखा सिंह ।

कोम, खत्री ।

जमीन - जायदाद, कोई नहीं ।

रूपया-पैसा, कोई नहीं ।

क्लेम ....?"[2]

मोहन राकेश की इस कहानी में सरकार द्वारा लोगों के माली नुकसान की कथित भरपाई पर व्यंग्य किया है । साधु सिंह का आर्थिक नुकसान कुछ नहीं हुआ है, मगर विभाजन के दौरान हुए दंगों की भगदड़ में उसे अपनी पत्नी से बिछुड़ना

----

1. यशपाल :तर्क का तूफान - पृ. 119

2. सं. अनीता राकेश:मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियाँ-पृ.112

पड़ा क्या उसकी भरपाई सरकार कर सकती है ?

मोहन राकेश की अन्य कहानी "परमात्मा का कुत्ता" में एक पात्र कहता है "तुम सब कुत्ते हो, और मैं भी कुत्ता हूँ । फर्क सिर्फ इतना है कि तुम लोग सरकार के कुत्ते हो-हम लोगों की हड्डियां चूसते हो और सरकार की तरफ से भौंकते हो मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ । उसकी दी हुई हवा खाकर जीता हूँ और उसकी तरफ से भौंकता हूँ ।" ।

शरणार्थियों को फिर से घर बसाने और काम-धंधों के लिए सरकार की ओर से किए जा रहे राहत कार्यों में अपनायी जा रही लालफिताशाही , टरकाने और घुसखोरी की नीति पर यह कहानी व्यंग्य करती है । एक आलोचक के शब्दों ,में "परमात्मा का कुत्ता" में आदमी के कुत्ते(अन्यायी अफसरों के लिए भूंकने वाले कर्मचारी कुत्ते) और परमात्मा के कुत्ते (ईश्वरी न्याय के लिए भूंकने वाले अन्याय-पीड़ित सामान्य जन) का विरोध उभारते हुए लेखक ने सरकारी व्यवस्था के शोषणपन,निष्क्रियता , घुसखोरी तथा अन्याय से ग्रस्त वातावरण और उसे तोड़ने के लिए तड़पते हुए , चीखते हुए उपेक्षित आम आदमी का बड़ा ही व्यंग्यात्मक चित्रण किया है ।"2

एक अन्य कहानी "मुस्लिम-मुस्लिम भाई-भाई" का यह संवाद देखिये:- "मुसीबत के वक्त मदद न करे, तो कम से कम और तो न सताए । हमें स्पेशल देने से क्या मतलब?-हम तो

---

1. - वही -. पृ. 324

2. रामदरश मिश्र- आज का हिंदी साहित्य: संवेदना और दृष्टि-पृ. 182

यहाँ से जाना चाहते हैं जैसे भी हो । इस्लाम में तो सब बराबर हैं । "।

मुसीबत की मारी स्त्रियाँ पाकिस्तान जाना चाहती हैं, उन्हें ट्रेन के स्पेशल होने से कोई मतलब नहीं है । मगर गाड़ी के भीतर बैठी स्त्रियों को उनसे अपने आराम में असुविधा हो सकती है । इसलिए वे धर्म तो क्या इंसानियत का भी ध्यान न रखकर उनको खरी-खोटी सुनाती हैं और अंतत: उनको डिब्बे में चढ़ने नहीं देती । अज्ञेय ने इस कहानी में इस्लाम धर्म में समता और भाई-चारे के सिद्धांत के खोखले पन पर व्यंग्य किया है ।

"रमंते तत्र देवता" शीर्षक कहानी के ये शब्द कितने व्यंग्यात्मक हैं:-"हिंदू धर्म उदार है । इसमें दो फायदे हैं- एक तो कभी चूक नहीं होती, दूसरे यह तरीका दया का भी है । लेकिन यह बताइए अगर आदमी पशु है तो औरत क्यों देवता हो ? देवता मैं जान-बूझकर कहता हूँ, क्योंकि इंसान का इंसाफ तो देवताओं से भी ऊँचा उठ सकता है । " 2

यहाँ हिंदू-समाज के उन पतियों पर व्यंग्य किया गया है । जो अपनी संकीर्ण और क्रूर प्रवृत्ति के कारण अपनी पत्नी पर अविश्वास कर उसे घर से मात्र इसलिए निष्कासित कर देते है कि वह एक रात घर से बाहर गुजार कर आयी है । घर न लौट पाने के पीछे वास्तविक परिस्थितियाँ क्या थीं,

----

1. अज्ञेय : ये तेरे प्रतिरूप - पृ. 64

2. - वही - पृ. 72

उनकी ओर से वे आँख मूंद लेते हैं । जबकि इस कहानी में पति महोदय को भी उसी रात परिस्थितियों की मांग के कारण किसी मित्र के यहां रात बितानी पड़ी थी ।

4. नाटकीयता:

विष्णु प्रभाकर की कहानी "मैं जिंदा रहूंगा" में संवाद की शैली व्यापक रूप से इस्तेमाल की गई है । आखिर तक कहानी संवादों के माध्यम से चलती है । इस कहानी में लेखकीय कथन और संवादों के बावजूद , नाटकीयता है । इसमें वर्णनात्मकता से अधिक नाटकीयता है । ये संवाद बहुत तीखे, मन:स्थिति और परिस्थिति के अनुकूल हैं:-

"दिलीप आपका लड़का है?"

"जी हां । आज तो वह मेरा ही है ।"

"आज तो ?"

"जी हां, वह सदा मेरा नहीं था ।"

"सच?"

"जी हां । कपड़े के साथ लौटते हुए राज ने उसे पाया था।

"क्या,"...."कहां पाया था ?"

"लाहौर के पास एक ट्रेन में ।" ।

एक और उदाहरण:-

"आपके साथ जो नारी आती है, वह आपकी कौन है?"

"आपका मतलब?"

"जी....।"

"..वह मेरी सब कुछ है और कुछ भी नहीं है।"

---

1. सं. नरेंद्र मोहन: भारत-विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां-1।

"जी मैं पूछता था क्या वे आपकी पत्नी है ?"

"पत्नी...?"

"जी ।"

"नहीं ।"

"नहीं ?"

"जी नहीं ।"

"आप सच कह रहें हैं ?"

"जी हाँ । मैं सच कहता हूँ । अग्नि को साक्षी करके मैंने कभी उनसे विवाह नहीं किया ।"

"फिर ?"

"लाहौर से जब भागा था, तब मार्ग में एक शिशु के साथ उसे मैंने संज्ञाहीन अवस्था में एक खेत में पाया था ।"।

उपरोक्त उदरण में संवाद बहुत छोटे-छोटे और छिन्न दिखाई पड़ते हैं । इन संवादों में नाटकीयता के गुण भरे पड़े हैं । कहीं पूरे वाक्य हैं, कहीं अधूरे और कहीं मात्र शब्द है । इन संवादों में शब्दों का चुनाव परिस्थिति एवं मन:स्थिति के अनुसार हुआ है । ये संवाद कथा को गति प्रदान करने में सहायक सिद्ध हुए हैं ।

अज्ञेय की कहानी "शरणदाता" में नाटकीय संवाद तीन-चार वाक्यों के हैं । इनमें वातावरण की भयावहता को अलग के साथ - साथ पात्रों की मन: स्थिति में होते हुए परिवर्तन को व्यक्त करने की क्षमता है -

---

।• - वही - पृ• ।।8-।।9

..." आप खुशी से न जाने देंगे तो मैं चुपचाप खिसक जाऊंगा । आप सच-सच बताइए आप से उन्होंने क्या कहा?"

"धमकियां देते रहे और क्या ?"

"फिर भी, क्या धमकी आखिर..."

"धमकी को भी "क्या" होती है क्या? उन्हें शिकार चाहिए ....हल्ला करके न मिलेगा तो आग लगाकर लेंगे ।"

"ऐसा । तभी तो मैं कहता हूं, मैं चला । मैं इस वक्त अकेला आदमी हूं कहीं निकल जाऊंगा । आप घर-बार वाले आदमी-य लोग तो सब तबाह कर डालने पर तुले हैं ।"

"गुड हैं बिलकुल । " ।

अन्य कहानियों में आये नाटकीय संवाद चरित्रों को खोलते चलते है । तथा कथा की गति को भी आगे बढ़ाते है "बदला" कहानी का यह नाटकीय संवाद देखिए:-

"सरदार जी , आप पंजाब से आए हो ?"
"जी ।"
"कहां घर है आपका ?"
"गोमूरे में था । अब यहीं समझ लीजिए ..."
"यहीं ? क्या मतलब ?"
"जहां मैं हूं, वहीं घर है । रेल के डिब्बे का कोना ।"[2]

---

1. अज्ञेय : ये तेरे प्रतिरूप - पृ. 47
2. " वही - पृ. 76

एक अन्य उदाहरण - पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र" की कहानी "ईश्वर द्रोही" से देखिए :-

"इ नवाब जादी ।"

"नवाबजादी के मालिक - आका ।"

"मुझे मालिक क्यों कहती हो ?"

"मुझे नवाबजादी क्यों कहते हो ?"

"तुम नवाबजादी नहीं हो ? तुमने मुझे पनाह नहीं दी है ?"

तुम मेरे मालिक नहीं हो ? तुम्हारे दादा नवाब नहीं थे ?

"अच्छा भाई, तुम नवाबजादी नहीं "तुम" हो।"

"अच्छा भाई, तुम भी मालिक नहीं "तुम" हो।"

"तुम सरकारी लाने न जाया करो ।"

"क्यों ?"

"मछुआ बाजार के मुसलमान तुम्हें हिंदू के घर से निकालने की धुन में हैं ।"

"वाह रे निकालने की धुन में हैं । अंग्रेजी राज नहीं, नवाबी है ?"

"अच्छा तुम मुसलमान क्यों नहीं हो जाती ?"

"तुम मुसलमान क्यों नहीं हो जाते ?"

----

1. पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र": ऐसी होली खेलो लाल, पृ. 5।

5. चरित्र-चित्रण :-

भारत विभाजन सम्बधी कहानियों के विविध रूपों और रंगों के पात्र मिलते हैं, जो मानव प्रकृति के असंख्य पक्षों के उद्घाटन के साथ परिस्थितियों के घात-प्रतिघात में मानव मन की संश्लिष्ट दशाओं और व्यक्तित्व के विकास की विचित्र परिस्थितियों को भी रेखांकित करते हैं। ये पात्र देश-विभाजन की त्रासदी के शिकार और शिकारी दोनों हैं, इसलिए ये तत्युगीन यथार्थ के मूर्तरूप भी हैं। नीचे कुछ कहानियों के प्रमुख पात्रों का विवेचन किया गया है।

जेबुन्निसा (शरणदाता) इंसानियत की प्रतीक है। शेख अताउल्लाह पर देविंदर लाल की जिम्मेदारी है। जेबू घर की सबसे छोटी सदस्या है। उस पर देविंदर लाल की कोई जिम्मेदारी नहीं थी। जब रक्षक ही भक्षक बनता है, तो वह (स्त्री) इंसानियत के अधिक निकट होती है। मुसलमान घर की होते हुए भी वह मुसलमान नहीं है, एक इंसान है और वह उसी हैसियत से देविंदर लाल की रक्षा का दायित्व उस कुटिल माहौल में भी निभा जाती है। वह बदले में देविंदर लाल से यही इल्तजा करती है-"आप के मुल्क में अक्लीयत का कोई मजलूम हो तो याद कर लिजिएगा। इसलिए, नहीं कि वह मुसलमान है, इसलिए कि आप इंसान है।"1

सिख शरणार्थी (बदला) शेखूपुरा का रहने वाला है। विधर्मियों ने उसके परिवार को मार डाला। उसका कोई ठौर-

---

1. अज्ञेय : ये तेरे प्रतिरूप - पृ. 54

ठिकाना नहीं है । अपने एक पुत्र के साथ वह दिल्ली से अलीगढ़ के बीच रेलगाड़ी से यात्रा करता है तथा असहाय और आतंकित लोगों को दिल्ली और अलीगढ़ के बीच इधर और उधर अपने संरक्षण में पहुंचाता है । इस प्रकार के नेक कार्य से वह अपने दिन गुजार रहा है और अपने ऊपर हुए अत्याचार का बदला इंसान की मदद और सेवा करके उतार रहा है । वह कहता है-"मैं बदला ले सकता हूं-और वह यही, कि मेरे साथ जो हुआ है, वह और किसी के साथ न हो ।"[1] वह सहज ही पाठक की सहानुभूति का पात्र बनता है, क्योंकि वह मानवता के आदर्श रूप में सामने आता है । साम्प्रदायिकता की आग को रोकने के लिए सिख शरणार्थी का यह कदम सराहनीय है, क्योंकि उस दौरान हुई अधिकतर मार-काट बदले की भावना से ही प्रेरित थी ।

गनी मियां (मलबे का मालिक) ऐसे लोगों का प्रतिनिधित्व करता है जो टूटते हुए मानवीय मूल्यों और बदलते हुए संबंधों में भी आस्था और विश्वास की किरण देखते हैं । वह मिलनसार है तथा सहज विश्वास का प्रतीक है । उसका पुत्र चिराग और उसका परिवार रक्खा पहलवान के हाथों मारा जा चुका है । गनीमियां इस बात से अनभिज्ञ है । वह पहलवान से पहले जैसे सहज विश्वास और आत्मीयता से मिलता है और कहता है-"मैंने आकर तुम लोगों को देख लिया, तो समझूंगा कि चिराग को देख लिया । अल्लाह तुम्हें सेहतमंद रखे ।"[2] गनी मियां निरीह और दया का पात्र नज़र आता है ।

----

1. - वही - पृ. 79
2. सं. अनीता राकेश: मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियां -पृ. 230

शाहनी ﴾सिक्का बदल गया ﴿ ममता और करूणा की प्रतिक है । वह जमींदारिन है । उसका पति शाहजी और पढ़ा-लिखा जवान पुत्र स्वर्ग-सिधार चुके हैं । सारे गांव पर उसकी ममता है। शेरा को उसने अपने पुत्रवत पाला-पोसा है। उसमें परोपकारिता एवं दानशीलता भी है । उसने थानेदार दाउद खां की भीतर को सोने के कनफूल लिए तथा भागेवाल में बनने वाली मसीत के लिए तीन सौ रूपये दान दिए । उसने अपने कोमल व्यवहार के कारण अपनी असामियों को कभी नाते-रिश्तेदारों से कम नहीं समझा । शाहनी को सुरक्षित स्थान पर पहुंचाने के लिए ट्रक आता है । उस समय भावुकतावश उसकी आंखों में आंसू आ जाते हैं, किंतु उसमें दूसरे ही क्षण स्वाभिमान की भावना जाग उठती है-"शान से निकलेगी इस पुरखों के द्वार से, मान से लांघेगी यह देहरी, जिस पर एक दिन वह रानी बनकर आ खड़ी हुई थी ।"[1] उसकी विदाई पर सारा गांव रोता है, समय ही ऐसा आ गया कि शाहनी को वे न रोक पाने के लिए विवश हैं । इस पात्र को सभी की संवेदना प्राप्त होती है ।

यूनस खां ﴾मेरी मां कहां﴿ मानवीय दुर्बलताओं पर विजय प्राप्त करता हुआ अंत में मानवीय आदर्श की ओर अग्रसर होताहै । वह खूंखार बलोच सिपाही है, जिसने अनेक"काफिरों" को मौत के घाट उतारा है । वह एक हिंदू बच्ची को घायल और मूर्च्छित अवस्था में देखता है । उसके चरित्र में मानव-

----

1. कितने टोबा टेक सिंह : पृ. 96

हृदय की संश्लिष्ट रचना हुई है । उसमें नाना भावों का उत्थान-पतन होता है । भावों के घात-प्रतिघात कभी उसे कातर, कभी कठोर तथा कभी कोमल बनाते हैं-"लाशों के लिए कब रूका है वह ? पर यह एक घायल लड़की...। उससे क्या ? उसने ढेरों के ढेर देखें हैं औरतों के मगरनहीं, वह उसे जरूर उठा लेगा । अगर बच सकी तो..तो । वह ऐसा क्यों सोचता है ।"[1] यूनस खाँ के चरित्र से पता चलता है कि व्यक्ति के भीतर हैवानियत से दबी हुई इंसानियत जोर मार कर ऊपर आती है और वह मानव को मानवीय कार्यों की ओर प्रेरित करती है । ऐसा ही चरित्र हिंदू बाबू (अमृतसर आ गया है)[2] का है , जो आवेश में अपने होश खो बैठता है और उस जुनून में अमानवीय कृत्य करता है । होश आने पर वह अपने किए पर पश्चाताप करता है ।

कमाल भाई (अन्तिम इच्छा) में दृढ़ता का अभाव है । वह मुस्लिम-लीग की विचार-धारा से प्रभावित होकर पाकिस्तान में जा बसता है, किंतु जब कभी अपने शहर गया आता है तो उसका मन वापस कराची जाने को नहीं करता था । मगर वह जाने के लिए विवश था । वह पाकिस्तान को चुन चुका था । वह महसूस करता था, कि पाकिस्तान जाकर उसने गलती की है । काश कि वह अपने अब्बा का कहा मान लेता उसके भीतर निरन्तर एक छटपटाहट अपनी जमीन के प्रति बनी रहती है और मृत्यु से पूर्व अपनी पत्नी से अन्तिम इच्छा

1· सं·नरेंद्र मोहन:भारत विभाजन:हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ-56

2· - वही - पृ· 75

के रूप में कहते हैं -"मैं कराची के रेगिस्तान में मरना नहीं चाहता । मुझे वहीं दफन करना फलगू नदी के उस पार कब्रिस्तान में जहाँ अब्बा की कब्र है और बड़े अब्बा की ।"[1] ऐसा ही चरित्र इसी लेखक की कहानी "परदेसी"[2] का छाको है जो ढाका (पूर्वी पाकिस्तान) जा बसा है । वह भी अपने प्रदेश में होने वाले धार्मिक उत्सव से, मीलों दूर बैठा, निकटता बनाए हुए है । जब वह अपने घर कुछ दिन की छुट्टी लेकर आता है । वापस जाने लगता है तो भावुकता वश रो पड़ता है, किन्तु वह जाने के लिए विवश है, क्योंकि वह पूर्वी पाकिस्तान की नागरिकता ले चुका है ।

मिस्टर पुरी (मेरा वतन) उन सभी विस्थापितों का प्रतिनिधित्व करता है जो अपने वतन की याद को भुला पाने में असमर्थ रहे तथा उसी पीड़ा को जीवन की अन्तिम साँस तक सहते रहे । मिस्टर पुरी लाहौर पैदा हुए । वहीं पढ़-लिखकर वकालत में प्रसिद्धि प्राप्त की । विस्थापित होकर अमृतसर में आ गए, किन्तु वे बार-बार भेष बदलकर लाहौर जाते रहे । वहाँ की यादों में जीते रहे । अपने वतन के प्रति अनजाना-सा खिंचाव उनके भीतर है जो बार-बार उनको अपनी ओर आकर्षित करता है । उनके मन में अपने वतन के प्रति अटूट प्रेम है । जब उन्हें हिंदू के रूप में पहचान कर एक मुसलमान गोली मार देता है तब भीड़ में से मिस्टर पुरी के

----

1. - वही - पृ. 6।

2. सं. नरेंद्र मोहन: सिक्का बदल गया -पृ. 13।

बचपन का मित्र हसन आकर पूछता है कि वह यहां क्यों आया तब वह बताते हैं-"मैं यहां क्यों आया ? मैं यहां से जा ही कहां सकता हूं ? यह मेरा वतन है, हसन । मेरा वतन....1" । मिस्टर पुरी दो देशों के बीच खींची गयी सीमा-रेखा को अंत तक दिल से स्वीकार नहीं कर सका ।

प्राण (मैं जिंदा रहूंगा)2 के पर दुख कातर चरित्र को उभारा गया है । वह उदम्य उत्साह और आशावादी दृष्टिकोण अपनाए हुए है । विभाजन के दौरान उसके जीवन में अत्यन्त दुर्गत घटनाएं घटीं । उसका अपना परिवार एक-एक कर उस विभीषिका का शिकार हो गया । वह एक बच्चे (दिलीप) और स्त्री (राज) को आश्रय देता है, किंतु घटनाएं ऐसा नाटकीय मोड़ लेती हैं कि वे एक-एक करके अपने वास्तविक सम्बंधियों के पास पहुंच जाते हैं । प्राण उन्हें उनके वास्तविक संबंधियों को सौंपकर मानवीय कर्तव्य को निभाता है । वह सब घटनाओं को सहता हुआ अदम्य उत्साह का परिचय देताहै । वह व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर उठा हुआ है वह शालीनता और सज्जनता का प्रतीक है ।

विभाजन की विभीषिका के शिकार अधिकतर छोटे व्यापारी, डाक्टर, वकील, क्लर्क, ड्राईवर , किसान ,

---

1. विष्णु प्रभाकर: मेरा वतन पृ. 19

2. सं. नरेंद्र मोहन: भारत-विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियां-110

दुकानदार, तांगा चलाने वाले, रंगरेज आदि कोटियों के पुरुष पात्र इन कहानियों में हैं। स्त्री पात्रों में अधिकतर गृहणियां ही आयी हैं।

विभाजन की दुर्घटना से मध्यम वर्ग और निम्न वर्ग के लोग ही प्रभावित हुए। उनको सीधे-सीधे इस भयंकर दुर्घटना का सामना करना पड़ा। उन लोगों ने विभाजन को धोखा होने पर भी अपनी सम्पत्ति का मोह नहीं छोड़ा और उसके परिणाम उनको भुगतने पड़े, जबकि शायद उच्चवर्ग के लोग अपने धन के बल पर सम्पत्ति का मोह छोड़कर सीमा-पार जा बसे थे। सरकार की ओर से उनके लिए स्पेशल ट्रेन (अज्ञेय की कहानी मुस्लिम-मुस्लिम भाई-भाई) की भी व्यवस्था थी।

पाँचवा अध्याय

उपसंहार

उपसंहार :

अंग्रेजों ने हिंदू-मुस्लिम में भेदभाव पैदा करके अपने शासन को मजबूती प्रदान की । अंग्रेज सरकार सन् 1857 के विद्रोह से सबक ले चुकी थी, इसलिए उन्होंने इन दोनों की एकता पर चोट की । हिंदुओं को सरकारी नौकरियों में अधिक जगह देकर मुसलमानों को उनके विरुद्ध कर दिया ।

सर सैयद अहमद खाँ के प्रयासों से अंग्रेज सरकार द्वारा मुसलमानों के प्रति किए जा रहे भेदभाव को दूर किया गया तथा मुसलमानों को शिक्षा की ओर अग्रसर करके अंग्रेजों के प्रति वफादार बनने को कहा गया ।

कांग्रेस का राष्ट्रीय आंदोलन राष्ट्रीय - हित की चिंता से प्रेरित था । सर सैयद अहमद खाँ ने इनसे अपने समुदाय और सारे देश का अहित माना ।

लार्ड कर्जन ने बंग - भंग करके हिंदू -मुस्लिम की थोड़ी-बहुत बची एकता को तोड़ने का प्रयास किया । इसके परिणाम स्वरूप राष्ट्रीय आन्दोलन सम्पूर्ण भारत में फैला । राष्ट्रीय कांग्रेस मुसलमानों में भी लोकप्रिय हो रही थी । देश के प्रमुख मुसलमानों ने कांग्रेस की टक्कर में मुस्लिम-लीग की स्थापना की, जिसमें राजभक्ति-पूर्ण विचारोंऔर साम्प्रदायिक-दृष्टि को केंद्र में रखा गया ।

मिंटो-मार्ले-रिफार्म द्वारा मुसलमानों को अलग निर्वाचन-क्षेत्र और अधिक प्रतिनिधित्व प्रदान करने से कांग्रेस-सभ इस योजना की निंदा की गयी । मुसलमान बिना प्रयत्न किए हिंदुओं से

अधिक अधिकार प्राप्त किए जा रहे थे ।

सन् 1937 के आम चुनाव में कांग्रेस को बहुमत मिला । कांग्रेस ने मुस्लिम-लीग को मंत्री परिषदों में हिस्सा न देने और उसे मुसलमानों की एक मात्र संस्था मानने से इंकार कर गलती की । इससे उनके आत्म सम्मान को गहरी चोट पहुंची ।

मुस्लिम-लीग ने अपनी छवि सुधारने के लिए मजहब को अपनी कूट-नीति का आधार बनाकर लोगों की धार्मिक - भावनाओं को उकसाया और हिंदू-मुस्लिम दंगों से यह शंका जाहिर की गयी कि इस समस्या का हल देश का विभाजन ही है ।

गांधी जी तथा देश के मुसलमानों ने मि॰जिन्ना को आवश्यकता से अधिक महत्व देकर पाकिस्तान की समस्या को और भी मुखर कर दिया ।

दोनों पक्षों ने केबिनेट मिशन की योजना को स्वीकार कर लिया था, किंतु नेहरू जी के यह कहने पर कि कांग्रेस इस योजना का अपनी मर्जी के मुताबिक केंद्रीय सत्ता का उपयोग करेगी । मि॰ जिन्ना बोखला गए । उस समय नेहरू जी ने केबिनेट मिशन योजना के समझौते के खिलाफ बयान देकर गलती की।

16 अगस्त 1946 को "सीधी कारवाई दिवस के दंगों में राजनीति और धर्म का घिनौना इस्तेमाल किया गया । जिनमें यह साबित किया गया कि हिंदू-मुस्लिम दो कौमें है, जो एक राष्ट्र में नहीं रह सकती इसलिए इनका अलग-अलग रहना ही श्रेयष्कर है ।

गांधी जी का यह कहना कि बंटवारा मेरी लाश पर होगा । ये सब बातें रखी रह गयी । नेताओं के अथक प्रयास से भी इस विभाजन को टाला नहीं जा सका । कांग्रेस अपने सिद्धांतों के विपरित विभाजन को स्वीकार करने के लिए विवश हो गयी ।

विभाजन होने पर लाखों की संख्या में लोगों को सीमा-रेखा से इधर-उधर जाकर शरणार्थी बनना पड़ा । इस दौरान अमानवीय कारनामों की अनेकों हिंसक वारदातें हुई ।

अगर दोनों सरकारें विस्थापन के लिए कोई ठोस योजना को तैयार कर अमल में लातीं तो इन हिंसक वारदातों में अवश्य कमी आती ।

भारत-विभाजन की दुर्घटना अभूतपूर्व थी । लाखों लोगों पर इसका प्रभाव पड़ा । मानवीय मूल्यों और मानवीय सम्बंधों में परिवर्तन तथा टकराव पैदा हुए । एक-दूसरे के प्रति विश्वास संशय में बदला, आस्थाएं डिग गयीं । विभाजन पर लिखी कहानियों में मानवीय-कृत्यों की पहचान और उनको फिर से परिभाषित करने की कोशिश की गई है ।

विभाजन राजनीतिक रूप से स्वीकार कर लिया गया था किंतु असंख्य लोग ऐसे भी थे जो अपनी मातृ-भूमि की याद को जीवन भर सीने में लिए सिसकते रहे और सरकार द्वारा बनाई गयी सीमा-रेखा को स्वीकार नहीं कर सके । विभाजन की इस निस्सारता को लेकर "मेरा वतन" (विष्णु प्रभाकर) "पानी और पुल" (महीप सिंह) "अंतिम इच्छा" (जदीउज्जमां)

आदि कहानियां लिखी गयी हैं ।

साम्प्रदायिकता के घोर हैवानियत के अंधकार में कुछ लोग इंसानियत की मशाल लिए चल रहे थे । उन्होनें मानव की सुरक्षा के लिए सराहनीय कार्य किए । साम्प्रदायिकता के विरोध में ऐसी पवित्र भावनाओं की अभिव्यक्ति "शरणदाता", बदला§ अज्ञेय§ "खुदा खुदा की लड़ाई"§यशपाल§ "ईश्वर द्रोही" §उग्र§ आदि कहानियों में मिलती है ।

हिंदू-मुस्लिम जातीय और संस्कृति में समन्वय की पहचान कराने वाली "अंतिम इच्छा"§बदी उज्जमा§ "कितने पाकिस्तान"§कमलेश्वर § "खुदा खुदा की लड़ाई" आदि कहानियां हैं ।

दंगों के दिनों में दोनों ही ओर संवेदनशील मानवीय सोच के कुछ लोग थे । जो सदियों पुरानी जातीय संस्कृति और सभ्यता को मिटने से बचाने के लिए उदार मानवीयता का परिचय दे रहे थे । "मलबे का मालिक" §मोहन राकेश§"मेरी मां कहां"§कृष्णा सोबती§ "पानी और पुल" §महीप सिंह§ "मैं जिंदा रहूंगा"§विष्णु प्रभाकर§ "रमते तत्र देवता§अज्ञेय§ "ईश्वर द्रोही§उग्र§"कितने पाकिस्तान" §कमलेश्वर§ आदि कहानियों में उदार मानवीयता पर बल दिया गया है ।

विस्थापन होने पर लोगों को अपनी जमीन से उखड़ना पड़ा । और उस क्षेत्रिय लगाव को "कितने पाकिस्तान" §कमलेश्वर§ "अंतिम इच्छा"§§बदीउज्जमा§ "मेरा वतन"§विष्णु

प्रभाकर) "क्लेम" (मोहन राकेश) आदि कहानियों में व्यक्त किया गया है ।

शरणार्थियों को सीमा-पार आकर जो कष्ट झेलने पड़े और सरकार की ओरसे किए गए राहत-कार्यों में कहाँ क्या कमी रही । इस ओर "टेबल लैंड" (अश्क) "नारंगिया" (अज्ञेय) "क्लेम", "परमात्मा का कुत्ता" (मोहन राकेश) "मुक्ति" (देवेंद्र इस्सर) आदि कहानियाँ पाठकों का ध्यान आकृष्ट करती हैं ।

अधिकतर कहानियाँ यथार्थ एवं प्रत्यक्ष घर, नामों को आधारा बनाकर लिखी गयी हैं । इसलिए इनमें वर्णनात्मक शैली का अधिक उपयोग हुआ है । भाषा में क्षेत्रिय रंगत और पात्रों के अनुसार शब्दों के चयन पर ध्यान दिया गयाहै । कहीं - कहीं विभाजन से उपजी अमानवीयता और सरकार पर किए गए मार्मिक व्यंग्य उभरे हैं ।

सहायक ग्रंथों की सूची

क्र.सं.	लेखक	पुस्तक का नाम
1.	अब्दुल कलाम आजाद	आजादी की कहानी अनु. महेंद्र चतुर्वेदी
2.	कुलदीप नय्यर	दूर के पड़ौसी (विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. संस्करण, 1973)
3.	डोमिनीक लापियर तथा लैरी कॉलिन्स	माउंटबेटन और भारत का विभाजन (सरस्वती बिहार, प्रथम सं. 1982)
4.	नरेंद्र मोहन	दृश्यांतर (किताब घर मेन रोड, गांधी नगर प्रथम संस्करण-1985)
5.	मन्मथ नाथ गुप्त	कांग्रेस के सौ वर्ष ( )
6.	प्रो.मुकुट बिहारी लाल	भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन ( )
7.	मीरा सीकरी	नयी कहानी (पराग प्रकाशन, दिल्ली-32 प्रथम संस्करण, 1984)
8.	राम गोपाल	भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास (मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 1970)
9.	रामधारी सिंह दिनकर	संस्कृति के चार अध्याय (राजपाल एंड संस, 1956)

10• राम मनोहर लोहिया — भारत विभाजन के गुनहगार
(लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
द्वितीय संस्करण, 1985)

11• रामदरश मिश्र — आज का हिंदी साहित्य
संवेदना और दृष्टि
(अभिनव प्रकाशन, दिल्ली, 1975)

12• लिओनार्ड मोसले — भारत में ब्रिटिश राज्य के अन्तिम
दिन ।
(आत्मा राम एण्ड संस, दिल्ली
प्रथम संस्करण-1964)

13• सूर्यनारायण रण सुभे — देश-विभाजन और कथा-साहित्य
(संचयन, 152 सी ब्लाक गोविंद
नगर, कानपुर-6,
प्रथम संस्करण - 1987)

आधार ग्रंथों की सूची

1• अज्ञेय — ये तेरे प्रतिरूप
(राजपाल एण्ड संस, दिल्ली
छठा संस्करण, 1981)

2• सं• अनीता राकेश — मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियाँ
(राजपाल एण्ड संस, दिल्ली,
संस्करण-1987)

3• प्रकाशन — कितने टोबा टेक सिंह
(पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, 1987)

4.	सं॰ गिरिराज शरण अग्रवाल	साम्प्रदायिक सद्भाव की कहानियाँ (प्रभात प्रकाशन, दिल्ली)
5.	सं॰ नरेंद्र मोहन	भारत-विभाजन: हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ (निधि प्रकाशन, दिल्ली)
6.	सं॰ नरेंद्र मोहन	सिक्का बदल गया (सीमान्त पब्लिकेशन्स इंडिया-1975)
7.	पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र"	ऐसी होली खेलो लाल (आत्मा राम एण्ड संस, 1964)
8.	यशपाल	सच बोलने की भूल (लोकभारती प्रकाशन, 1984)
9.	यशपाल	तर्क का तूफान (लोक भारती प्रकाशन सातवाँ संस्करण-1983)
10.	विष्णु प्रभाकर	मेरा वतन (निधि प्रकाशन, दिल्ली)

पत्रिका

1. समकालीन भारतीय साहित्य

(वर्ष : 7, अंक : 28, अप्रैल - जून 1987)